विमुक्त, घुमन्तू व अन्य जनजातियों पर केंद्रित

3

बूधन

दिसम्बर, 2001 सहयोग राशि : 10 रुपये

विमुक्त, घुमन्तू व अन्य जनजातियों पर केंद्रित

बूधन

वर्ष : 1 अंक: 3 दिसम्बर, 2001

आवरण चित्र
'ट्राइब्स' शॉप महादेव रोड के
सामने प्रदर्शित टेराकोटा
फोटो : सूरज देव बसन्त

संपादकीय व प्रबन्ध कार्यालय
महापंडित राहुल सांकृत्यायन प्रतिष्ठान
बी-3, सी ई एल अपार्टमेंट्स
बी-14, वसुन्धरा एन्क्लेव
दिल्ली-110096
फोन : 2618064, 4922803
E-mail : rmrc.bol.net.in

इस अंक में

गतिविधिया

तथाकथित अपराधी जनजातीय समाज

हमारे देश में मानव समुदाय का एक ऐसा भी हिस्सा है जिसे आज भी तथाकथित अपराधी जनजाति के रूप में जाना जाता है। इनकी अनुमानित जनसंख्या लगभग 6 करोड़ है। जब भी कहीं कभी, चोरी होती है, हत्या की वारदातें होती हैं, इन जनजातियों का हाथ होने की खबरें छपती हैं और प्रशासनिक तंत्र भी इसी आशय के बयान भी जारी करता है। यह हम सभी पढ़ते, सुनते और जानते आए हैं।

आजादी के 55 साल से चली आ रही इसी परम्परा का निर्वाह करते हुए हमारे गृहमंत्री ने विगत 2 अगस्त को लोकसभा में उत्तर-प्रदेश के मुरादाबाद जिले के सिरसावन गांव में 22-23 जुलाई को हुई हत्या की घटना में एक अपराधी जनजाति का हाथ बताया। उत्तर-प्रदेश सरकार द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार गृहमंत्री ने कहा कि जिस तरह मुरादाबाद में सोते समय हत्या की गई, उसी तरह हमलावरों ने मेरठ में 17-18 जुलाई को तथा लखीमपुर खीरी में 26-27 जुलाई को सोते समय हमला किया। इसी से सम्बन्धित एक रिपोर्ट के अनुसार गृहमंत्री ने कहा कि "...जांच-पड़ताल से यह साफ तौर पर पता चला है कि यह काम उन जनजातियों का है जिन्हें ब्रिटिश राज में पहले अपराधी जनजाति घोषित किया जा चुका है"[1]।

इन हमलों के पीछे अपराधी लोगों का हाथ होना संभव है, जो किसी भी जाति के हो सकते हैं। पर किन्हीं दो घटनाओं में एक ही तरह के सम्भावित अपराधियों के होने से पूरी जाति को अपराधी घोषित करना किसी भी आधुनिक चिंतन परम्परा के परे है। यह तो उनके मानव होने के मूलभूत अधिकारों का भी हनन है। यह तो उस औपनिवेशिक अवधारणा का पोषक है जिसकी आवश्यकता ब्रिटिश शासकों को इस देश में अपना शासन बनाए रखने के लिए पड़ी थी।

इस अवधारणा की क्या परिणति हो सकती है, इसका भी एक उदाहरण देखिए। मुम्बई के मलाबार हिल के पुलिस इंस्पेक्टर के. एल. जाधव ने 19 जुलाई को एक सर्कुलर निकाल कर मलाबार के नागरिकों से बिहारी और नेपाली नौकरों की नियुक्ति न करने की अपील की। इस सर्कुलर के अनुसार बिहारी और नेपाली नौकर अपराधी प्रवृत्ति के होते हैं। इसलिए इन्हें नौकर के रूप में नियुक्त न किया जाए। ऐसी अवधारणाओं की यही तार्किक परिणति होती है।

यह मात्र सैद्धान्तिक विवेचन का मसला नहीं है। गृहमंत्री के वक्तव्य के साथ गृह मंत्रालय का पूरा प्रशासनिक तंत्र जुड़ा हुआ है। यह तंत्र गृहमंत्री के इस बयान को इन जनजातियों के उत्पीड़न के लिए लाइसेंस की तरह उपयोग कर सकता है। सैकड़ों वर्षों से उत्पीड़ित इन जनजातियों का भावी जीवन भी दमनकारी हाथों की गिरफ्त में आ सकता है। साथ ही आजादी के 55 साल बाद तथा इन जनजातियों के 1952 में विमुक्तिकरण के बाद भी यदि हम अपने प्रशासन को इसी अवधारणा पर अवलंबित कर रहे हैं तो यह एक चिंता का विषय है।

अभी स्थिति यह है कि जब किसी इलाके में चोरी होती है तो इन जनजातियों के लोगों में से गिरफ्तारियों का दौर शुरू हो जाता है। चोरी कबूल करवाने के लिए उन्हें जो यातनाएं दी जाती हैं, मुख्य धारा के लोग शायद उससे अपरिचित हैं। मैत्रेयी पुष्पा द्वारा वर्णित एक जीवन्त दृश्य देखिए— "कंधे पर बंदूक रखकर बूट धमधमाते हुए सिपाही कबूतरा (बुन्देलखंड में रहने वाली एक तथाकथित अपराधी जनजाति) बस्ती में पहुंचे। बाकायदा चोरों को पकड़ लाए। देखते ही देखते सड़क पर पिटाई-खाना खुल गया। हमारी उम्र के बच्चों ने ऐसी पिटाई पहली बार नहीं देखी थी, फिर भी हम नए सिरे से घबराए, कांपे और रुलाई रोकते रहे। सड़क का काला तारकोल लाल हो गया। इस रास्ते आनेवाली बैलगाड़ियां, ट्रैक्टर और बस रुक गए। स्कूल

की छुट्टी करनी पड़ी। सिपाहियों की बहादुरी देखते ही बनती थी और कबूतराओं की सहन शक्ति का इम्तहान था। चमड़े के कोड़े की फटकार के साथ दर्शकों का सीत्कार उठता, मगर कबूतराओं की तो जैसे सांस भी बेआवाज हो उठी। वे झूठ की मिट्टी से बने आदमी, अपना जुर्म कबूल करें तब छोड़े जायें। कोड़ा, घूंसा और जूता उनकी देह पर दस्तक देते रहे।

उठते हुए कबूतराओं को सिपाहियों ने धक्के दिए

—सालो हरामी तुम्हारा अचार डालेंगे हम?

सिर के बल गिरते तो काशीफल की तरह जमीन से टकराकर उनके सिर फट जाते। मगर वे संकेत समझते हुए सध गए—"अचार डालेंगे"— मतलब कि औरतों को थाने जाना होगा।

मुजरिम हवालात के लिए चले गए। तमाशा छंट गया। मास्साब के रुपए फिर भी नहीं मिले। मिलते कहां से? रुपए तो सोबरन की निकर के जेब में थे[2]।

इसी तरह तथाकथित अपराधी जनजातियों के लोग सामूहिक रूप से पिटते हैं, हवालात में बन्द किए जाते हैं तथा उनको छुड़ाने के लिए उनकी औरतों को थाने जाना पड़ता है। पुलिस हिरासत में होनेवाली घटनाओं की तो बात ही अलग है। कितने ही लोग हिरासत में ही दम तोड़ देते हैं। बंगाल की खेरिया सबर जनजाति के बूधन तथा महाराष्ट्र की पारधी जनजाति के पीन्या हरि काले की पुलिस हिरासत में हुई दर्दनाक मौतें किसी भी मानव हृदय को दहलाने वाली है।

सच तो यह है कि विमुक्त जनजाति के ऊपर कभी भी आक्रमण हो सकता है।

जालान का ही उदाहरण लीजिए। पारधी जनजाति की महिला जालान, विमुक्त एवं घुमन्तू जनजातियों पर आयोजित गोष्ठी में भाग लेने वड़ोदरा जा रही थी। वह नयी साड़ी पहने हुए थी। पुलिस ने उसे पकड़ लिया और भरी भीड़ में उसकी साड़ी इस कारण से उतार ली कि उसके पास पहनी हुई साड़ी का कैशमेमों नहीं था। उनकी अवधारणा के अनुसार निश्चित ही तथाकथित अपराधी जनजाति की इस महिला ने चोरी की होगी। यह आश्चर्य है कि यह सब उस समाज में हो रहा है, उस लोकशाही के वट-वृक्ष तले हो रहा है, जहां का संविधान राज्य के किसी भी नागरिक से धर्म, कौम, जाति, लिंग तथा जन्म-स्थान के आधार पर भेदभाव करने की इजाजत नहीं देता। हम आज भी अपने व्यवहार में, चलन में और यहां तक कि प्रशासनिक व्यवस्था में उन्हें जन्मजात अपराधी के रूप में ही देखते हैं, जबकि आज से 50 साल पहले इन जातियों को अनधिसूचित (विमुक्त) किया जा चुका है।

हमारे गृहमंत्री ने ब्रिटिश सरकार द्वारा जारी अपराधी जंनजाति अधिनियम का हवाला दिया है। हाँ! इन जनजातियों का जन्म वर्ष एक ही है-1871 । विश्व में भारत ही ऐसा देश है जहां लाखों लोग 1871 में एक ही साल में पैदा हुए हैं। 1871 और 1947 के बीच अनेक और समुदाय अपराधी जनजाति की सूची में सम्मिलित किये गए। आजादी के पहले स्थानीय लोग तथा पुलिस उनकी हत्या करती थी, उन्हें तरह-तरह से प्रताड़ित करती थी तथा जानवरों की तरह उनका शिकार करती थी। आजादी के बाद भी यह क्रम जारी है।

यह है हमारे स्वतंत्र भारत में विमुक्त जातियों की स्थिति। इस विषय पर विचार करते समय हमें इतिहास के पन्नों पर गौर करना होगा कि वे कौन लोग थे जिन्हें ब्रिटिश सरकार ने अपराधी जनजाति घोषित किया? क्या सचमुच उनके अपराधिक इतिहास थे? क्या पूरी जनजाति ही अपराध करती थी? और यदि ऐसा नहीं था तो उन्हें अपराधी जनजाति क्यों घोषित किया? विमुक्त एवं घुमन्तू जनजातियों की कहानी भारत के उपनिवेश के शुरुआती वर्षों की ओर जाती है। उस समय जो भी ब्रिटिश साम्राज्य और उसके विस्तार का विरोध करता था, वह अपराधी करार दिया जाता। उदाहरणार्थ— अपराधी जनजातियों में गिनी जाने वाली सूची में भील जनजाति भी शामिल है। हम सभी महाराणा प्रताप के गौरवपूर्ण व वीरतापूर्ण इतिहास के बारे में जानते हैं और यह भी जानते हैं कि इन्हीं भीलों ने उनका अंत तक साथ दिया। भील खानदेश में तथा नर्मदा नदी के तट पर ब्रिटिश शासकों से लड़े। उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 110 के तहत दंडित किया गया तथा अपराधी घोषित किया

गया[3]।

1857 के गदर के बाद ब्रिटिश सरकार भ्रम की स्थिति में थी। वह अनेक वर्गों को शंका की नजर से देखने लगी थी। इस मानसिकता में ऐसे लोग जो घुमन्तू थे या जो जंगलों से प्राप्त खाद्य पदार्थों पर आश्रित थे अत: ब्रिटिश साम्राज्य से टकराने को मजबूर थे, साम्राज्य उन्हें अपराधी करार देने लगा। इस तरह बंजारा जातियों, नटों, फकीरों, छोटे व्यापारियों तथा विघटित सैनिक टुकड़ियों को भी अपराधी जनजाति में शामिल किया गया। धीरे-धीरे यह सूची बढ़ती गयी तथा इनके नियमन के लिए अपराधी जनजाति अधिनियम-1871 बनाया गया। बाद में तो इस सूची में बहेलिया, मछुआरे, सड़कों पर घूम-घूमकर गाने वाले लोग तथा तालाब बनाने की कला में पारंगत जातियों को भी शामिल किया गया।

'अपराधी जनजाति अधिनियम-1871' के अनुसार, 'यदि स्थानीय सरकार के पास विश्वास करने के पर्याप्त कारण हैं कि कोई जनजाति, गिरोह या व्यक्ति समूह योजनाबद्ध तरीके से गैर जमानती अपराध करने का आदी है तो वह कौंसिल के गवर्नर-जनरल को रपट कर सकती है तथा इन जनजाति, गिरोह या व्यक्ति समूह को अपराधी जनजाति घोषित करने की आज्ञा की प्रार्थना कर सकती है।'

इस अधिनियम के अन्तर्गत-जनजातियों के अलावा गिरोहों तथा व्यक्ति समूहों को भी अपराधी घोषित करने का प्रावधान था। इस अधिनियम की धाराएं (1 तथा 20) जो कि अपराधी जनजातियों के उनकी निर्धारित सीमा से बाहर पाए जाने पर गिरफ्तारी से संबंधित थी, पूरे ब्रिटिश भारत पर लागू थीं। परन्तु अधिनियम की अन्य धाराएं बंगाल, उत्तर-पश्चिमी प्रदेशों तथा अवध पर ही लागू थीं।

इस अधिनियम के अन्तर्गत 100 से भी अधिक जनजातियों को अपराधी घोषित किया गया था।

आगे के वर्षों में इस सूची में बढ़ोतरी होती गयी तथा इससे संबंधित कुछ अन्य कानून भी बने। 1924 में अपराधी जनजातियों से संबंधित कानूनों को एकत्रित एवं विस्तार करने हेतु "अपराधी जनजाति अधिनियम-1924" लागू हुआ। इस अधिनियम के अन्तर्गत-अपराधी घोषित करने का अधिकार प्रांतीय सरकारों को दिया गया तथा यह पूरे ब्रिटिश भारत पर लागू था। इसके अनुसार अपराधी घोषित करने के लिए अब गवर्नर-जनरल की आज्ञा की आवश्यकता नहीं रह गयी। अब तक घोषित जनजातियों की संख्या 180 तक पहुंच चुकी थी तथा इस अधिनियम के तहत मद्रास प्रेसिडेंसी, हैदराबाद तथा मैसूर की अनेकों जनजातियां आ चुकी थीं।

किन विशिष्ट कारणों और परिस्थितियों में इनमें से प्रत्येक जनजाति को अपराधी घोषित किया गया, अपने आप में एक विस्तृत शोध का विषय है। परन्तु आम तौर पर ब्रिटिश सरकार के पास क्या कारण हुआ करते थे, कुछ उदाहरणों से स्पष्ट हो जाएगा। भील जनजाति को किन विशिष्ट कारणों से अपराधी जनजाति घोषित किया गया इसका वर्णन पहले ही किया जा चुका है। इसी तरह बीरभूमि तथा झारखंड के संथाल परगना में रहने वाली धिकारोस जनजाति है। महाश्वेता देवी के अनुसार ये लोग पारम्परिक रूप से लोहा गलाने तथा लोहे का सामान व हथियार बनाने तथा तोड़ेदार बन्दूक और कैनन गन बनाने में माहिर थे। 18वीं शताब्दी के अन्त से पूरी 19वीं शताब्दी में इस क्षेत्र में अनेकों जनजातीय विद्रोह हुए। धिकारोस जनजाति ने हथियार बनाए तथा संथालों के साथ सहयोग किया। 1856-59 में दूसरा संथाल विद्रोह तथा 1857-58 में ही पलामू का खरवार विद्रोह हुआ था। उसके 12 साल के अन्दर ही 1871 का अधिनियम पारित हुआ। धिकारोस को अपराधी के रूप में अधिसूचित किया गया। उनके पारम्परिक व्यवसाय को छीन लिया गया तथा जब कभी अपराध होता तो उन्हें जेल में डाल दिया जाता था। यह क्रम आज भी जारी है[4]।

इसके अतिरिक्त अन्य कारणों में घुमन्तू जातियों द्वारा एक स्थान पर न रहने तथा किसी निश्चित व्यवसाय का न होना भी ब्रिटिश शासन द्वारा शंका की दृष्टि से देखा जाता था। एक समूह जब चिह्नित कर लिया जाता तो उसके सदस्यों को अपराधी साबित करने की बात आती, ताकि उन्हें निगरानी में रखा जा सके। साथ ही यदि कोई सज़ा प्राप्त व्यक्ति है और उसका दूसरे

समुदाय से खून का नाता है तो अपने आप में यह उसके अपराधी होने का प्रमाण माना जाता था। अत: एक बार कोई समुदाय अपराधी घोषित हो जाता तो उससे संबंध रखने वाले अनेक समुदाय अपराधी जनजाति की सूची में आ जाते[5]। इस तरह भारत की सैकड़ों जातियों, जनजातियों एवं अन्य व्यक्ति समूहों को अपराधी घोषित किया गया। परन्तु आजादी के 55 वर्ष बाद भी ब्रिटिश सरकार द्वारा कलंकित इस वर्ग को हम आज भी अपराधी जनजाति मानते हैं, उनके साथ अपराधियों जैसा व्यवहार करते हैं और उन्हें जेलों में डालते हैं। यही नहीं इस वर्ग के लोग जनता की भीड़ द्वारा भी मारे जाते हैं तथा पुलिस हिरासत में उनकी मौतें होती हैं। यह अत्यंत दुख की बात है।

15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ मगर अपराधी जनजाति के लोग आजाद हुए 30 अगस्त 1952 को जब इन जातियों को अनधिसूचित किया गया। यानी पूरे 5 वर्ष बाद ये जनजातियां मुक्त हुईं और विमुक्त जनजातियां कहलाईं। पर क्या बदला ? जात-पात की हमारी मानसिकता आजादी के साथ छूट थोड़े ही गई। कई प्रदेशों ने 'अभ्यासिक अपराधी अधिनियम' लागू कर इन जनजातियों के लोगों को इस कानून के अधीन कर इन्हें समाज से अलग-थलग कर दिया। उनके उत्पीड़न का क्रम चलता रहा जो आज भी अनवरत जारी है। जीविकोपार्जन की सभी संभावनाओं से वे आज भी वंचित हैं, क्योंकि उनके पास कोई भी संसाधन उपलब्ध नहीं है। इसके चलते इन जनजातियों का दमन पूर्ववत् चल रहा है। इस तरह विकासमान भारत वर्ष में, जहाँ मुख्यधारा के लोग अपनी सुख-सुविधा व आनन्द की हर चीज प्राप्त कर लेने में सक्षम हैं वहीं इन जनजातियों के लोग आज भी जन्मजात अपराधी कहे जाते हैं, और जीवन की मूलभूत सुविधाओं से वंचित हैं। त्रासदी यह है कि मुख्यधारा के वे लोग जो काला धन पैदा कर रहे हैं, पैसों के लिए देश की प्रतिष्ठा दांव पर लगाने में जरा भी नहीं हिचकिचाते तथा करोड़ों का घोटाला कर लाखों लोगों को गरीबी की तरफ धकेलते हैं, आत्महत्या करने को मजबूर करते हैं, उन्हें कोई अपराधी नहीं कहता। उन्हें भी कोई अपराधी नहीं कहता जिनकी वजह से इन बेकसूर लोगों की पुलिस हिरासत में हत्या हो जाती है, या अंधी भीड़ द्वारा मार दिये जाते हैं। हमारा देश बहुत सारे धाराओं का सागर तो है पर शायद जो इसमें घुलता नहीं, वह छन जाता है। शायद यही कारण है कि स्वतंत्र भारत में इन तथाकथित अपराधी जनजातियों की तरफ बार-बार उंगली उठायी जाती रही है।

4 मई 1998 को, इनकी सामाजिक, आर्थिक स्थिति सुधारने हेतु बडोदरा की संस्था 'डी एन टी— रैग' ने, जिसकी अध्यक्षा महाश्वेता देवी हैं तथा संस्था के ही प्रो० गणेश देवी और श्री लक्ष्मण गायकवाड ने राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष माननीय न्यायमूर्ति श्री वेंकटचलैया को एक ज्ञापन दिया। आयोग ने एक सलाहकार मंडल का गठन किया जिसके अध्यक्ष डा० ब्रह्मदेव शर्मा थे। सलाहकार मंडल की रिपोर्ट में कहा गया है कि, यह सोच से परे है कि समाज के लोगों का एक वर्ग, जो कि इस उपमहाद्वीप के सर्वप्रथम निवासियों में से है तथा जनसंख्या का छह प्रतिशत है, उसे भुला दिया गया है और आजादी के अर्द्धशताब्दी के बाद भी सम्मानजनक जीवन से वंचित रखा जा रहा है। रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि, ''यद्यपि विरुद्ध नियम निरसित कर दिया गया है परन्तु पुलिस का विमुक्त जातियों के प्रति दृष्टिकोण नहीं बदला है। अपने प्रशिक्षण तथा अभ्यास के चलते वे इन जनजातियों को पुराने दृष्टिकोण से जन्मजात अपराधी नामित करते हैं।''

'सलाहकार मंडल' ने अपने महत्वपूर्ण सुझावों में मानवाधिकार आयोग द्वारा प्रत्येक राज्य में एक सेवानिवृत्त वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की नियुक्ति, त्रुटिपूर्ण पुलिस प्रशिक्षण में सुधार तथा अभ्यासिक अपराधी अधिनियम के निरसन का सुझाव दिया। मंडल ने यह भी सुझाव दिया कि सामाजिक न्याय मंत्रालय, भारत सरकार में विमुक्त समुदायों की नयी व सटीक सूची बनाने हेतु एक विशिष्ट प्रकोष्ठ की स्थापना की जाए। इस समुदाय को भी वे सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं जो आम भारतीय को उपलब्ध है तथा विमुक्त जातियों के लिए एक नया एवं विशिष्ट अत्याचार निवारण विधान का मसौदा बनाया जाय तथा संसद को यथाशीघ्र लागू करने हेतु पेश किया जाय।

अगस्त 1998 की इस रिपोर्ट में एक महत्वपूर्ण बात यह कही गयी है कि ''विमुक्त जातियों के पास किसी तरह का

संसाधन उपलब्ध नहीं हैं। उनके पास न तो जमीन है और न ही व्यावसायिक दक्षता, सिवाय कुछ लोगों के जो कि पत्थर तोड़ने या लोहे इत्यादि का काम करते हैं। जो दक्षता उनके पास थी उसे ये लोग अपने उत्पीड़न के समय छोड़ने के लिए मजबूर हुए।'' मंडल ने आम जनता का विमुक्त समुदायों के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तित करने हेतु एक वृहत् सूचना अभियान के प्रवर्तन का भी सुझाव दिया है।

लेकिन जमीनी सच्चाई यह है कि राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के सलाहकार मंडल द्वारा दिए गए सुझावों को धता बताते हुए मध्य-प्रदेश मानवाधिकार आयोग ने 'मध्य-प्रदेश में जातिगत वेश्यावृत्ति' नामक रिपोर्ट प्रकाशित की है जिसमें कुछ जनजातियों पर वेश्यावृत्ति तथा दलाली का आरोप लगाया गया है। रिपोर्ट कहती है कि डॉक्टरी परीक्षण के अनुसार इन जातियों की 50 प्रतिशत महिलाएं एच. आई. वी. से संक्रमित हैं। यानि आजादी के बाद भी हमारी दिमागी गुलामी आज भी यथावत है।

जात-पात के भेदभाव से ग्रसित हमारी दिमागी गुलामी का जब तक अंत नहीं होता, जातीय उत्पीड़न का अंत सम्भव नहीं दीखता। जिस समाज में किसी को चूहा या मूस खाने वाली जाति कहा जाता हो, किसी को अछूत तो किसी को जन्मजात अपराधी-ऐसा समाज कैसे विकसित हो सकता है? भारतीय समाज के विकास हेतु जात-पांत की क्षय होनी ही चाहिए। आखिरकार जातीय उत्पीड़न की जड़ जात-पांत के भेदभाव में ही तो हैं।

o o o o

इस अंक में जनजातियों तथा विमुक्त एवं घुमन्तू जातियों के प्रति समर्पित प्रख्यात लेखिका महाश्वेता देवी का एक महत्वपूर्ण भाषण 'कार्य कैसे किया जाए' प्रस्तुत कर रहे हैं, जिसमें उन्होंने कार्यकर्ताओं के बीच अपने अनुभवों को साझा किया है। 'बूधन' को हिन्दी में निकालने की प्रेरणा स्रोत महाश्वेता जी ही हैं। वह चाहती हैं कि 'बूधन' बंजारा भाषा के साथ-साथ अन्य भाषाओं में भी प्रकाशित हो तो डी एन टी का बहुत बड़ा काम होगा। आदिवासियों और जनजातियों के प्रति महामहिम राष्ट्रपति के आर नारायणन की चिंताओं को उजागर करता संदेश हम डॉ० ब्रह्मदेव शर्मा के सौजन्य से पाठकों तक पहुँचा रहे हैं। इसके अलावा प्रधानमंत्री के नाम डी-नोटीफाईड एण्ड नोमॅडिक ट्राईबल्स राईट्स एक्शन ग्रुप के सचिव जी एन देवी का पत्र साथ में दस्तावेज के तहत न्यायमूर्ति एम एन वेंकटचलैया को भेजा गया वह पत्र भी इस अंक में हमने रखा है जिसमें भारत के खानाबदोश व गैर विज्ञापित जनजातियों हेतु तीसरी अनुसूची के निर्णय की सिफारिश की गई है। रतन कात्यायनी पिछले एक दशक से यायावर कबीलों के बीच मुक्तिधारा संस्थान के तहत काम कर रहे हैं। उनका आलेख 'अरावली में घुमन्तू कबीलों का मुक्ति अभियान' घुमन्तू जीवन के तमाम पक्षों और संघर्षों को उद्घाटित करता है।

'बूधन' के इस अंक पर पाठकों की प्रतिक्रियाओं का हमें इन्तजार रहेगा।

अनिल कुमार पाण्डेय

सन्दर्भः

1. जनसत्ता, 3 अगस्त 2001
2. अल्मा कबूतरी—मैत्रेयी पुष्पा
3. बूधन-अंग्रेजी अंक—डॉ० जी० एन० देवी
4. बूधन-अंग्रेजी अंक, फरवरी-मार्च-1999—महाश्वेता देवी
5. बूधन-अंग्रेजी अंक, दिसम्बर-1998-जनवरी-1999—मीना राधाकृष्ण

आपका पत्र मिला

आपको पत्र लिखने में खुशी इस बात की है कि विमुक्त, घुमन्तू और अन्य जनजातियों पर हिन्दी में प्रथम ही 'बूधन' द्वारा इनकी समस्याएँ देश के लोगों तक पहुँचने में आपका बहुत बड़ा योगदान रहा है। महाश्वेता देवी के नेतृत्व में चलनेवाले डी० एन० टी०-रैग संगठन का कार्य संपूर्ण देश में चलाने के लिए एक हिंदी पत्रिका की बेहद जरूरत थी, जो आपने 'बूधन' द्वार पूर्ण की है। पहिला और दूसरा दोनों अंक मैंने पढ़े हैं। दूसरे अंक में 'अल्मा कबूतरी की खोज में' मैत्रेयी पुष्पा ने बहुत ही रोचक बातें पाठक के सामने रखी है। कुछ दिन पहले ही मैंने मैत्रेयी पुष्पा की 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास पढ़ना शुरू किया है। दिल्ली आने के बाद में उनसे भेंट करना चाहता हूँ। पैठण की घटना पर आधारित एक लेख मैं भेज रहा हूँ, उसे प्रसिद्धि देना।

– लक्ष्मण गायकवाड़, मुम्बई

'बूधन' का प्रवेशांक तथा आपका पत्र मुझे मिला था। पत्र और पत्रिका दोनों ही साथ रखकर मैं नागपुर से रेल द्वारा दिल्ली जा रहा था। मुझे लगता है किसी सहयात्री को पत्रिका बहुत रुचिकर लगी होगी अत: वह गायब कर दी गई। इधर घुमंतू जनजातियों पर विशेष कार्य तो नहीं हुआ है फिर भी मैं समय-समय पर लिखकर भेजता रहूंगा। 'नीतिमार्ग' में बूधन के संबंध में सामग्री छापूंगा ताकि उसका प्रचार-प्रसार हो। शुभकामनाएं।

– जयंत वर्मा, जबलपुर

आपके पत्र से ऐसा लगा, जैसे आप व्यावसायिकता से नहीं बल्कि वास्तविक 'मिशन' के रूप में कार्य कर रहे हैं। वर्तमान में ऐसे विरले ही लोग मिलते हैं। मेरा शोध-कार्य कोल आदिवासियों पर था। मेरी एक पुस्तक भी 'जनजातीय समाज एवं संस्कृति' प्रकाशित हो चुकी है। वर्तमान में 'बुन्देलखंड की जनजातियों' पर किताब लिखने का क्रम जारी है। आपसे निवेदन है कि जनजातियों पर कोई अन्य सूचना स्रोत हो तो जानकारी दें।

– डा० स्वामी प्रसाद गुप्ता, हमीरपुर

आपके संस्थान से 'बूधन' नामक पत्रिका प्रकाशित की जाती है। हमारी संस्था उक्त पत्रिका को सतत् रूप से प्राप्त करने की इच्छुक है। कृपया प्रकाशित दोनों अंकों को भेजते हुए वार्षिक शुल्क एवं अन्य नियमों से शीघ्र ही संस्था को अवगत कराने की व्यवस्था करें ताकि पत्रिका की वार्षिक-सदस्यता ली जा सके।

– संयुक्त संचालक
आदिमजाति अनुसंधान संस्थान, भोपाल

आपकी पत्रिका 'बूधन' का दूसरा अंक देखा। संपादन बहुत सुरुचिपूर्ण और प्रकाशित सामग्री उपयोगी तथा सराहनीय है। नटरंग प्रतिष्ठान में हम नाटक, प्रदर्शनकारी कलाएं, साहित्य, कला आदि संबंधी पुस्तकें, फोटोग्राफ, स्मारिकाएं, कैसेट आदि के साथ पत्रिकाओं की बंधी जिल्द और स्फुट अंक भी रखते हैं। इस सामग्री के उपयोग के लिए हम शोधकर्मियों, साहित्यकारों, शोधार्थी आदि से कोई शुल्क नहीं लेते। प्रख्यात नाट्यचिंतक, आलोचक और कवि नेमिचन्द्र जैन के संपादन में निकलने वाली नटरंग पत्रिका का प्रकाशन नटरंग प्रतिष्ठान से ही होता है।

– शिवनारायण खन्ना
नटरंग प्रतिष्ठान, दिल्ली

'इंडिया टुडे' के ताज़ा अंक में आपकी नई पत्रिका 'बूधन' के विषय में जानकारी मिली। मैं विगत बीस वर्षों से सामाजिक अनुसंधान के कार्यों में लगा हुआ हूं। अनुसंधान की शुरुआत 'गांधी शांति प्रतिष्ठान', नई दिल्ली से किया था। अभी मैं अनुसंधान एवं योजना से संबंधित कार्यों के लिए बिलासपुर में पदस्थ हूं। अत: आपकी पत्रिका पढ़ने की इच्छा बन आई।

– के०एम० महापात्र, छत्तीसगढ़

अगस्त की 'इंडिया टुडे' में सतरंग कालम में आपकी नव-प्रकाशित पत्रिका 'बूधन' के प्रकाशन की जानकारी मिली, मेरी तरफ से हार्दिक बधाई। विशेष निवेदन है कि मैं श्री राहुल सांकृत्यायन का बहुत पुराना प्रशंसक हूँ। मैं इनकी जानकारी 1965 से रखता हूँ। इनका एक चित्र भी मेरे पास है, जो साप्ताहिक हिन्दुस्तान में छपा था। मैं इनके साहित्य की खोज में कई पुस्तकालयों में भटका हूँ, पर इनका साहित्य उपलब्ध नहीं हुआ है। मैं सोचता हूँ आपका यह प्रतिष्ठान तो संपूर्ण साहित्य रखता होगा। कृपया उपलब्ध साहित्य की सूची भेजने का श्रम करें ताकि मैं पुस्तकों हेतु आदेश भेज सकूं। यदि साहित्य आपके यहाँ उपलब्ध नहीं है तो कृपया उस प्रकाशन का पता दें जहाँ से राहुल सांकृत्यायन का साहित्य उपलब्ध हो सके। मैं आपका बहुत आभारी रहूंगा।

– ओ०पी० गुर्जर, जोधपुर

'बूधन' पत्रिका का अंक-2 अपने प्रिय मित्र से प्राप्त हुआ। पूरी पढ़ डाली। पत्रिका अच्छी लगी। 1998 में मैं धुलिया कॉलेज में हिन्दी व्याख्याता का इंटरव्यू देने के लिए गई थी। इंटरव्यू लेने वाले सज्जनों ने कहा—एक पोस्ट के लिए 32 लोग आये हैं। उन सभी में सबसे ज्यादा योग्य आप हैं। लेकिन, हमें किसी डी.एन.टी. का चयन करना है। जिस लड़के का चयन किया गया वह मात्र एम०ए० था। उस समय से मेरे मन में डीएनटी के प्रति आक्रोश था। *'बूधन' पत्रिका पढ़ने के बाद मुझे लगा, इस जाति ने काफी अन्याय सहा है। समाज में इन्हें वह स्थान मिलना चाहिए जो सामान्य वर्ग को मिला है। इतनी अच्छी पत्रिका निकालने के लिए आप मेरा धन्यवाद स्वीकारें।*

- डॉ० राजेश्वरी सिंह, सतना मध्यप्रदेश

मुझे आपकी पत्रिका 'बूधन' (अप्रैल-जून) की जानकारी 'हंस' (अक्टूबर) के समकालीन-सृजन-संदर्भ स्तंभ से हुई। मैं भारतीय जन-नाट्य-संघ (इप्टा) से जुड़ा एक संस्कृतिकर्मी हूँ। अपने गृह-जिला-नवादा में संतोषजनक साहित्यिक-गतिविधि के लिए भी साहित्यिक-साथियों के साथ प्रेमचंद साहित्यिक मंच बनाकर प्रयासरत हूं। मैं आपकी पत्रिका का वार्षिक-ग्राहक बनना चाहता हूँ। अत: आपके पत्र और पत्रिका की नमूना-प्रति का इंतजार बेसब्री से करूँगा।

- अशोक समदर्शी, सचिव कौवाकोल इप्टा
नवादा, बिहार

आपने एक पुस्तक अनत्यजों (मुसहर आदि छोटी घुमन्तू जातियों) पर लिखा है। कृपया समीक्षार्थ एक प्रति भेजें। मैं श्री काशी विद्वत्परिषद की मुख पत्रिका 'सिद्धांत' में समीक्षा प्रकाशित करूंगा। इतिशुभम्।

- धर्मदत्त शास्त्री, वाराणसी

आपके प्रतिष्ठान ने 'बूधन' नाम से जो पत्रिका प्रकाशित की है और उसके द्वारा भारतीय जनजातियों के बारे में जो जानकारी आपने उपलब्ध करायी है, वह काबिले तारीफ है। मैं आपके इस प्रयास की प्रशंसा करता हूं।

- रवीन्द्र कुमार , यमुना नगर, हरियाणा

'बूधन' हिन्दी पत्रिका का (अप्रैल-जून 2001) मुझे प्राप्त हुई। यह बेहद रुचिपूर्ण पत्रिका है। काश! इसमें बंजारा, मुसहर एवं अन्य पिछड़ी जातियों के संस्थानों का पता चलता। जिससे उन समुदाय व वर्गों को सीधे आर्थिक मदद मैं प्रदान कर सकूं।

- रेव्ह पादरी. प्रदीप्धा आर बोंग्वा
मोतीहारी, बिहार

'बूधन' कल मिला। इस अंक में मैत्रेयी पुष्पा का लेख 'अल्मा कबूतरी की खोज में' अद्भुत है। मैत्रेयी जी का गद्य अभी के लेखकों से अलग है। 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास मैंने दो बार पढ़ा है। उसके बाद यह लेख पढ़ना एक अलग अनुभव है। कबूतरा जनजाति तथा कज्जाओं की मानसिकता का जो चित्रण मैत्रेयी पुष्पा ने दिया है वो घर में बैठकर समाज की समस्याओं पर लिखने वाली हिन्दी साहित्य की महान लेखिकाओं के लिए एक चुनौती है। अच्छे अंक के लिए बधाई।

- अनंत विजय, दिल्ली

मुख्यधारा से कटी हुई जातियों-जनजातियों के उत्थान हेतु आपका प्रयास सराहनीय है। प्रकाशन प्रतिष्ठान के कर्णधारों सहित आपको धन्यवाद ही नहीं साधुवाद देना चाहिए। ऐसी ही जातियां भारत के सभी प्रान्तों में पायी जाती हैं, जो सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक उत्पीड़न का शिकार होती आ रही हैं। आजादी पूर्व के राजपूताना, अजमेर, मेरवाडा, मेवाड़, गोड़वाड़, हाड़ौती, शेखावाटी क्षेत्रों को मिलाकर राजस्थान का गठन हुआ था। निम्नतर जीवन जीने को बाध्य सांसी, गाजैकीया, साटीया, वादी, कालबेलिया, गरासीया भील आदि जातियों का परंपरावादी तरीके से शोषण किया जा रहा है। इस विषय में हमारी स्वशासी संस्था ने जागृति का शंख फूंका है। इन जातियों के विकास के लिए समाज-कल्याण विभाग है, जो घोटालो-षड्यंत्रों का गढ़ है। कोई पत्रिका भी नहीं प्रकाशित हुई कि जिससे इन लोगों की त्रासदी जन-जन तक पहुंचा कर सरकार का ध्यान आकर्षित करें। दलीय राजनीति की शिकार ये जातियाँ कई दुर्व्यसनों से ग्रस्त हैं। इस हेतु आपका संस्थान हमें किस तरह का सहयोग कर सकता है ?

- आशुतोष श्री वैष्णव
पाली, राजस्थान

'बूधन' पाई हरप उर आवा। आज बूधन के प्रारंभिक दो अंक प्राप्त हुए। प्रसन्नता हुई। विमुक्त, घूमन्तू व दीगर जनजातियों पर आपने महत्वपूर्ण जानकारी एकत्रित की है। नवीन और पुरानी जानकारियों को आपने एक मंच प्रदान किया है। श्रम और कटिबद्धता के लिए बधाई, शुभकामनाएं। राजस्थान भी घुमन्तू, जनजातियों-वनवासियों का हृदय स्थल है। मैं भी इनकी विरासत पर आपको आलेख भेजूंगा। एक पीड़ा बार-बार होती है कि हाशिये पर जीने वाला यह समाज कब विकास की प्राण वायु लेगा। जमाने ने तो इनकी धूप, इनकी मिट्टी, इनके ऊजाले और इनके श्वसन तंत्र पर तक शिकंजा कस दिया है। मानवाधिकार की चेतना के लिए जानी जा रही शताब्दी के दिमागधारियों को जरूर इस दिशा में चिंतन करना चाहिए।

- डॉ० श्रीकृष्णकुमार 'जुगनू'
उदयपुर

आपका भी पत्र मिला

1. भवानी शंकर कुसुम—सचिव, ग्राम भारती समिति, अम्बेर, जयपुर
2. दीपक धोलकिया—दिलशाद गार्डेन, दिल्ली-95
3. विष्णु वर्मा—ककोली, फैजाबाद, उ०प्र०
4. डॉ० कालीचरण यादव—मड़ई, बिलासपुर, छत्तीसगढ़
5. जगमोहन रौतेला—देहरादून, उत्तराखण्ड
6. के० एन० त्रिवेदी—बनीपार्क, जयपुर
7. कुं० शिवभूषण सिंह गौतम—छतरपुर (म०प्र०)
8. प्रो० ओंकार लाल श्रीवास्तव—राजनांदगांव, छत्तीसगढ़
9. देवीलाल गुर्जर, 'शेतुर'—मालवामिल, इन्दौर, म०प्र०
10. मोहम्मद अलिम पासा—बलानगीर, उड़ीसा
11. गोपाल कृष्ण—फैजाबाद, उ०प्र०
12. प्रशान्त कु० मिश्र—मधुवनी, बिहार
13. प्रो० आर० के० महोबिया—उमरिया, म०प्र०
14. डा० योगेश धस्माना—चमोली, गढ़वाल
15. रामेश्वरम—डालटनगंज, पलामू, झारखंड
16. मदन राठी—खामगांव महाराष्ट्र
17. प्रेमलाल राज—छिन्दवाड़ा, (म०प्र०)
18. दिनेश कंडवाल—अगरतला
19. डॉ० मीनाक्षी स्वामी—सुखलिया, इन्दौर (म०प्र०)
20. इरेश डी० कानानी—जूनागढ़ (सौराष्ट्र)
21. श्री लक्ष्मीकान्त मुकुल—बक्सर, बिहार
22. शंभू कुमार—अनुग्रह छात्रावास, बिहार कृषि महाविद्यालय
23. सुभाष—संवाददाता, प्रभात खबर, शेरघाटी, गया, बिहार
24. कमल कुमार जेस्वानी—सेन्द्रा, राजस्थान
25. संतोष के० दुरिया—राजस्मुंड, राजस्थान
26. कर्नल वी०के० मलहोत्रा—मुख्यालय द्वारा 56 ए०वी०ओ०
27. अजर्य शर्मा— अमर उजाला, हिन्दी दैनिक, गौतम बुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

"आँख मूँदकर हमें समय की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। हमें अपनी मानसिक दासता की बेड़ी की एक-एक कड़ी को बेदर्दी के साथ तोड़कर फेंकने के लिए तैयार होना चाहिए। बाहरी क्रान्ति से कहीं ज्यादा ज़रूरत मानसिक क्रान्ति की है। हमें दाहिने-बायें, आगे-पीछे दोनों हाथ नंगी तलवार नचाते हुए अपनी सभी रूढ़ियों को काटकर आगे बढ़ना चाहिये। क्रांति प्रचण्ड आग है वह गाँव के एक झोपड़े को जलाकर चली नहीं जाएगी। वह उसके कच्चे-पक्के सभी घरों को जलाकर खाक कर देगी और हमें नये सिरे से नये महल बनाने के लिए नींव डालनी पड़ेगी।"

– राहुल सांकृत्यायन

पत्र प्रधानमंत्री के नाम

16 अगस्त, 2001

श्री अटलबिहारी वाजपेयी
प्रधानमंत्री, भारत सरकार
नयी दिल्ली

आदरणीय श्री वाजपेयी जी,

स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर हम आपको राष्ट्र के नाम संबोधित करते हुए देख रहे थे। तभी हमें छत्तीसगढ़ से दस जनजातीय लोगों के मृत बैल के विषाक्त माँस खाने के कारण मौत की आघात पहुंचाने वाली खबर मिली। जनजातीय लोग मृत-जानवरों को खाने के लिए मजबूर हैं क्योंकि इनके पास क्षुधा शांति का और कोई जरिया नहीं है। और यह हम सभी के लिए- जो कि प्रतिदिन दो वक्त का भोजन प्राप्त कर सकते हैं- बड़े शर्म की बात है।

यदि जनजातीय विकास हेतु मिली हुई राशि का उपयोग किया गया होता तो इस परिस्थिति से बचा जा सकता था। विगत दिनों मैंने 'गुजरात समाचार' में एक रपट पढ़ी थी कि गुजरात प्रान्त ने इस वित्तीय वर्ष में जनजातीय विकास के लिए मिली राशि में से एक रुपया भी खर्च नहीं किया है। यही स्थिति बंगाल में भी है जहाँ कि महाश्वेता देवी जी द्वारा मुकदमा दायर करने के परिणामस्वरूप कलकत्ता हाईकोर्ट के निर्देश पर खोजबीन चल रही है। भारत सरकार के जनजातीय विकास मंत्रालय ने 'खाद्यान्न बैंक योजना' प्रस्तावित की है। परन्तु मेरी जानकारी के अनुसार इसका कार्यान्वयन उड़ीसा में आधे मन से किया गया है और यह योजना लगभग असफल हो चुकी है। यदि आपकी सरकार सभी राज्यों के (उत्तर-पूर्वी राज्यों को छोड़कर) जनजातीय गांवों को 'खाद्यान्न बैंक योजना' के अन्तर्गत लाए तो इस पर कुल आठ सौ करोड़ रुपए (योजनानुसार रुपये 65,000 मात्र प्रति गांव की दर से) अधिक की लागत नहीं आएगी। अत: मैं यह नहीं समझ पा रहा हूं कि आपकी सरकार भारत की जनजातियों को 'भोजन सुरक्षा' क्यों नहीं मुहैया करा सकती। महाराष्ट्र के कोर्कू लोगों की मौत कुपोषण से हो रही है। राजस्थान एवं गुजरात की जनजातीय महिलाएं अपने भूखे परिवार के भरण-पोषण के लिए निरंतर बेची जा रही हैं। 'सिकल सेल एनिमिया' (Sickle cell anemia) जो कि पहले ही जनजातीय जनसंख्या के लगभग 3 फीसदी को प्रभावित कर चुका है, भोजन की कमी से और भी वृहत रूप धारण कर रहा है। अकेले गुजरात में, जहां कि हमने परीक्षण करवाया है, लगभग दो लाख लोग 'सिकल सेल एनिमिया' के शिकार हो चुके हैं और अपनी निश्चितप्राप्त मृत्यु के कगार पर खड़े हैं। विमुक्त जनजातियों की स्थिति तो और भी बुरी है, क्योंकि भूख के साथ-साथ उन्हें अत्याचारों का भी सामना करना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में भी यदि सरकार मूक-दर्शक बनी रहे तथा खाद्य सुरक्षा मुहैया कराना असंभव हो तो फिर आजादी का हम सबके लिए क्या उपयोग है?

मैंने स्वयं के लिए यह व्रत लिया है कि मैं दिन का एक समय का भोजन जीवन पर्यन्त त्याग दूंगा। साथ ही मैं गांव-गांव में जनजातीय लोगों में इस अन्याय के विरुद्ध जागरूकता पैदा करूंगा कि वे इस दमनकारी परिस्थिति का मुकाबला करें ताकि एक भी जनजातीय व्यक्ति की भूख से मृत्यु न हो। मैं भारत की जनजातियों की ओर से आपसे निवेदन करता हूं कि आप इस विषय में कोई ठोस कदम उठाएं।

भवदीय

जी० एन० देवी

6-यूनाइटेड एवेन्यू

दिनेश मिल के पास, बड़ोदरा-390007

प्रति -

1. श्री के० आर० नारायणन - भारत के राष्ट्रपति
2. श्री जार्ज फर्नांडीस - संयोजक, राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन
3. श्री एल० ओराम - आदिवासी कल्याण मंत्री, भारत सरकार
4. श्री दिलीप सिंह भूरिया - अध्यक्ष, अनु०जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार
5. न्यायमूर्ति एम० वेंकटचलैया - अध्यक्ष, संविधान के कार्यान्वयन की समीक्षा हेतु राष्ट्रीय आयोग
6. प्रख्यात लेखिका महाश्वेता देवी- अध्यक्ष, डीनोटीफाइड एण्ड नोमाडिक ट्राइब्ल्स राइट्स एकशन ग्रुप
7. सम्पादक, राष्ट्रीय दैनिक समाचार पत्र

भाषा रिसर्च सेंटर बड़ोदरा ने 24 फरवरी, 2001 को 'जनजातियाँ और दसवीं पंचवर्षीय योजना' विषय पर एक कार्य शिविर का आयोजन किया था। इस कार्य शिविर में बांग्ला की प्रख्यात लेखिका एवं जनजातियों तथा विमुक्त एवं घुमन्तू जनजातियों के उत्थान के प्रति, समर्पित महाश्वेता देवी ने 'कार्य कैसे किया जाए' विषय पर महत्वपूर्ण भाषण दिया। वर्षों की साधना के परिणामस्वरूप प्राप्त अनुभवों के आधार पर महाश्वेता देवी ने कार्यकर्ताओं का मागदर्शन किया। उनके अनुभव तथा सुझाव हमारे देश के अनेक कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन करेंगे, ऐसा समझकर हम उस भाषण के कुछ महत्वपूर्ण अंश यहां प्रस्तुत कर रहे हैं। 'बूधन' की तरफ से अनिल कुमार पांडेय व सूरज देव बसन्त ने इस कार्य शिविर में हिस्सा लिया था। भाषण का यह अंश 'बूधन' के लिए इन्हीं कार्यकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है। महाश्वेता देवी ने बांग्ला-हिन्दी में अपना भाषण दिया था। इस भाषण को यहाँ बांग्ला-हिंदी में ही प्रस्तुत किया है।

कार्य कैसे किया जाए

☐ महाश्वेता देवी

...जैसा अनिल छापा है ('बूधन' के प्रथम अंक में छपे महाश्वेता देवी के साक्षात्कार की ओर इशारा) मैं बांग्ला-हिन्दी में बोलूँगी। पुराना दिन का बात पूछा जाता है, आप नक्सल लोग का बात करते हैं। हाँ! बहुत साल तक नक्सल मूवमेंट को समर्थन दिया क्योंकि वो लोग इलेक्शन को नहीं माना, वो लोग मिनिस्टर होने को नहीं चाहा। उनमें एक आदर्श था और एक भावना भी थी। नक्सल मूवमेंट के बारे में मैंने 'हजार चौरासी की माँ' किताब लिखी। क्योंकि नक्सल लड़का आ के मुझको बोला कि आप गांव में जैसा नक्सल मूवमेंट चल रहा है, उसके बारे में लिख रही हैं पर हमलोग कलकत्ता का रास्ता पर मर रहा है। आप कुछ नहीं लिखती हैं। इसी से आया वो छोटा सा उपन्यास 'हजार चौरासी की माँ'। मैं नहीं जानती थी कि इसका नाम इतना फैल जाएगा। पूरे जीवन मैंने कार्य ही समझा और कुछ नहीं समझा। लेखन भी काम था और सबकुछ भी काम था। 1963 से 1975 तक मैं 11 साल तक पलामू में घूमी। वहां बंधुआ मजदूर देखा कि वो कैसे रहता है। मैं उसके बारे में बहुत कुछ लिखी, बहुत कुछ किया। भारत का सबसे पहला बंधुआ मजदूर संगठन 1981 में पलामू जिला में बनाया गया था, मैं उनके साथ थी।

जब सिंहभूमि में पहली दफा झारखंड का मूवमेंट हुआ था मैं उन लोगों के साथ थी, उनका साथ दिया। ये मूवमेंट बहुत बड़ा हुआ था।

मैंने इसके बारे में बहुत कुछ लिखा। मेरी पहली किताब है 'झांसी की रानी'। उस टाइम में झांसी की रानी के बारे में कोई उपन्यास नहीं था। किधर है झांसी ? किधर है ग्वालियर ? किधर है काल्पी ? घूम-घूमके बहुत सारा सामग्री उधर से लेकर आई। बंधुआ मजदूर के बारे में मेरी सोच में यह बहुत महत्वपूर्ण काम किया।

उसके बाद जनजातियों के साथ जीवन बहुत युक्त कर लिया। दामोदर घाटी निगम देखा। जब दामोदर घाटी का बाँध बना, 30 हजार संथाल जनजातीय गाँव पानी के अन्दर चला गया। उसके 20 साल बाद अब इन 30 हजार गांवों का जितना भी जनजातीय लोग था, वह सारे भारत वर्ष में फैला हुआ है। वह अपनी भाषा भी भूल गया होगा। संथाल लोगों की संस्कृति बहुत मजबूत है। उनकी अपनी भाषा है, अपनी लिपि है। उन्होंने कम से कम चार क्रांतियां की। तब भी उनको बचा नहीं पाया। इसके बाद उसी समय से काम करना शुरू कर दिया। कागज में बहुत लिखती थी। गाँव-गाँव में महीना में कम से कम 20 दिन जाती थी और गाँव की रिपोर्ट लिखती थी। बंधुआ मजदूर हुआ, 1970 में कम्युनिस्ट मूवमेंट हुआ, झीकपानी में जब सीमेंट डस्ट से सिलकॉसिस फैला हुआ था, उसके खिलाफ भी लड़ा। बिड़ला एसवेस्टस के बारे में लिखा। मैंने देखा जनजातियों का भूमि चला जाता है। जनजातियों का पहचान चला जाता है। जिधर भी जनजातीय जमीन है उधर, खनिज पदार्थ होता है। सब कुछ होता है।

तेजगढ़ (वड़ोदरा) 'जनजातीय अकादमी' में महाश्वेता देवी वहाँ के निवासियों के बीच

इससे उन लोगों का जमीन हड़प लिया जाता है। ट्राइबल के लिए जमीन का लड़ाई-लड़ना पड़ा, जंगल का लड़ाई और लड़ना पड़ा और जंगल बचाना पड़ा।

ट्राइबल के बारे में लड़ते-लड़ते जो नोटिफाइड ट्राइब (अधिसूचित ज़नजाति) हैं उसके अन्दर बिहार में मुसहर

जब 1998 में बूधन सबर को मार दिया था पुलिस ने बहुत बेरहमी से, उस टाइम जाकर 'खेरिया सबर समिति' मैंने बनाया था। उनको जाकर बोला कि कुछ भी पेपर भेजो, मैं हाई कोर्ट में केस करूँगी। जिस दिन मैं यह केस दाखिल किया, मैं जमीन पर बैठ के रोई। मैं किधर भी नहीं रोती, पर मैं बहुत रोई

को देखा और परहिया को देखा। बहुत भीरु हैं, बहुत लंगड़ा है, परहिया का सबसे दु:ख का बात यही है।

भारत का आदिवासी जितना है, दुश्मन से साथ घिरा हुआ है। जो विकास है, जो चाहिए उसके लिए, बहुत बड़ा योजना है। पर वह जमीन छोड़कर चला गया है। चला जाने के बाद क्या होता है? कागज में तो भारत सरकार सब कुछ दिया है पर क्या देता है उसको? कुछ नहीं देता।

उसके बाद उड़ीसा चली आई। उड़ीसा में लोधा जनजाति को देखा, तब देखा कि लोधा जनजाति हमारे मेदिनीपुर में भी है। पश्चिम बंगाल में तीन विमुक्त जनजाति है। तब डी.एन.टी. (विमुक्त एवं घुमन्तू जनजातियाँ) को लेकर संघर्ष शुरू कर दिया। डी.एन.टी. का हाल कैसा है यह देखने के लिए आपको पूर्व में जाना पड़ेगा। बंगाल-बिहार-उड़ीसा तीन राज्य में जाओ। आप कभी नहीं भूलोगे कि इधर ये लोग बहुत दु:ख में है, बहुत दुख में है। इसके बाद मैं पुरुलिया में खेरिया सबर के अन्दर, लोधा के अन्दर काम किया। उनके अन्दर बहुत सारा जागरण हुआ। 'खेड़िया सबर समिति' शुरू किया पुरुलिया में। पुरुलिया बंगाल का सबसे गरीब जिला है। इसका आधा हिस्सा जनजाति और आधा जंगल था। सब काट दिया और सबको काट कर रेगिस्तान के माफिक बना दिया। और उधर सबर लोग किसी जाति या जनजाति के साथ नहीं था। ऐसे ही मध्यवर्ग के साथ रहा था। इसमें मैं जो देखा तो ताज्जुब हुआ कि अभी भी बार्टर सिस्टम चलता है। मैं खेड़िया सबर का बहुत इज्जत करती हूँ। भारत के आदिवासी का भी। क्योंकि भारत का आदिवासी बहुत सक्षम है। उनमें क्रूरता बहुत कम है। औरत को बहुत आजादी देता है। पूर्वी क्षेत्र में तो यही देखा। वह बच्चा लोग को भी बहुत प्यार करता है।

जब 1998 में बूधन सबर को मार दिया था पुलिस ने बहुत बेरहमी से, उस टाइम जाकर 'खेरिया सबर समिति' मैंने बनाया था। उनको जाकर बोला कि कुछ भी पेपर भेजो, मैं हाई कोर्ट में केस करूँगी। जिस दिन मैं यह केस दाखिल

किया, मैं जमीन पर बैठ के रोई। मैं किधर भी नहीं रोती, पर मैं बहुत रोई।

भारत में ऐसा कितना ही जरूरी काम है, उनके बारे में कुछ नहीं किया। गणेश देवी विश्वविद्यालय छोड़ दिया। जनजातियों को लेकर काम करता है। उनकी भाषा को लेकर शोध करता है। मैं वेरियार एल्विन, लेक्चर देने के लिए बड़ोदरा आई थी। उसके बाद जो हुआ उसमें बहुत कोई है। हमारा संसार बहुत बड़ा है। 'बूधन' का केस में हमलोग जीत गया। पश्चिम बंगाल सरकार को चार लाख रुपया मुआवजा भी देना पड़ा और यह डी०एन०टी० के इतिहास में पहली बार हुआ। इसी से प्रेरणा लेकर छारानगर का दक्षिण बजरंगे छारा का एक समूह बनाकर 'बूधन' नाटक बनाया। वो लोग जो छोटा-छोटा लड़का लड़की, जो कभी बंगाल का थिएटर नहीं देखा, कभी रवीन्द्र का नाटक नहीं देखा, जो बहुत आधुनिक नहीं है, वही मनुष्य यह थिएटर बनाया।

बहुत काम करना है। बात करने का समय बहुत कम है। सेमिनार बहुत कम चाहिए। कार्यशाला बहुत कम। सिर्फ काम चाहिए

छारानगर अहमदाबाद में एक 'घेटो' जैसा है। जब भी कुछ होता है, उन लोगों को अब भी तंग करता है। उनको दारू बनाना पड़ता है। एम.ए.-बी.ए., एडवोकेट, बहुत पढ़े-लिखे लोग छारानगर में हैं। अब यह अपराधी बस्ती नहीं है। सबसे पहले छारा लोग गणेश देवी से एक लाइब्रेरी चाहा, और कुछ नहीं। एक लाइब्रेरी बनाना, एक अच्छा सा स्कूल बनाना मुश्किल काम है। मगर पहले चाहो तो कुछ भी काम कर सकते हो। तो वही है मेरी बात। जनजातियों के जीवन में दुख है, वंचना है। मैं नहीं बोलती हूं कि गैर जनजातियों के जीवन में नहीं है। खुद अपने गृह राज्य में मैं 'म्यूनिसिपल हरिजन वर्कर यूनियन' की लड़ाकू प्रेसीडेंट हूं। लेकिन फर्क यही है कि जनजातियों के जीवन में वंचना है। ट्राइबल का नाम देकर, आदिवासी का नाम देकर भारत में बहुत सारे संगठन हैं पर डीनोटिफाइड (विमुक्त जनजाति) के बारे में किसी को चेतना नहीं है। डी०एन०टी० कलकत्ता में है, दिल्ली में है, बम्बई में है, महाराष्ट्र में है, पूरे भारतवर्ष में है। सूरतविहीन, बेहाल है। मैं कोई बड़ा वादा नहीं कर सकती। जब कुछ नहीं है, इधर हमलोग जितना बैठा है, जिंधर भी हो कुछ करो। इतना मुश्किल नहीं है। यह आदत पड़ गया है कि एक आंदोलन होना पड़ेगा, पेपर में जाना पड़ेगा तब काम होगा। जीवन इतना समय नहीं देता। किसी को नहीं देता। जिनके लिए भी संभव है, कुछ करो। स्कूल करो, मेडिकल यूनिट बनाओ, औरतों को सिखाओ, सब कुछ करो, नहीं तो कुछ नहीं बचेगा। और जनजातीय पहचान समाप्त हो जाएगी। तब भारत का कुछ नहीं बचेगा। तो मैं यही बोलूंगी कि कुछ काम करो।

मैं यह देखती हूं कि ट्राइबल सब-प्लान (उप-योजना) में करोड़ों रुपया आता है पर खर्च नहीं होता है। पूरे भारत वर्ष में ऐसा ही है। यू०पी० में, एम०पी० में, बिहार में, उड़ीसा में और किधर किधर मैं नहीं जानती। पश्चिम में आप लोग जिसको बहुत बड़ा अत्याचार समझते हैं वह कुछ नहीं है। क्योंकि महाराष्ट्र में कितना साल से देख रही हूं, सुनती हूं, प्रेसीडेन्सी स्कूल है। पाठशाला बना है। कुछ शिक्षा का बन्दोबस्त था, नहीं तो एक लक्ष्मण गायकवाड़, एक लक्ष्मण माने नहीं निकलता। वो लोग तो डी०एन०टी० है, जो डी०एन०टी० नहीं है, दलित से, महाराष्ट्र, कर्नाटक से लेखक नहीं निकलता। तो यही बात है। हम सबको काम करना है। इसमें कोई भी मदद कर सकता है। उसको डी०एन०टी० होना नहीं पड़ेगा। अनिल पांडे कोई डी०एन०टी० नहीं लेकिन वो हिन्दी में 'बूधन' निकाला। वो बहुत बड़ा काम किया। और जो लोग आया है, जैसा अजय दांडेकर इधर बैठा है, मराठी में बूधन निकालेगा। जो जिधर भी है बूधन निकालो। हर भाषा में बूधन निकालो। बंजारा भाषा में बूधन निकलो वो ज्यादा डी०एन०टी० का होगा। सब काम करो। ट्राइबल तो कितना ही वंचित है। उनको तो कुछ बचे, कुछ हो जाए। क्योंकि जो गैर जनजाति है वो इतना जमीन से नहीं उखाड़ा जाता। जनजातीय जमीन के नीचे में अच्छा पत्थर होता है, अच्छा खनिज होता है। इसलिए उनको भारी कीमत देना पड़ता है। उनका जमीन पर बांध बनता है। नर्मदा एक ही बांध नहीं है। भारत में बहुत सारा बांध है, बहुत सारे उद्योग हैं जो जनजातियों को उखाड़

दिया। जनजातीय समाज के पास बहुत बड़ी परम्परागत कला और संस्कृति हैं। गैर जनजातीय समाजों में भारत वर्ष में भूमि सुधार तो हुआ नहीं। अत: एक सामन्ती भूमि व्यवस्था आज भी है। अभी तक जनजातीय समाज उससे थोड़ा मुक्त है। उनके ऊपर भी बहुत आफत आता है। तो ये समझ लीजिए जिसको भी जो काम करने का है-बहुत काम करना है। बात करने का समय बहुत कम है। सेमिनार बहुत कम चाहिए। कार्यशाला बहुत कम। सिर्फ काम चाहिए। रतन ने काम किया, अनिल ने काम किया। 1999 में चर्चा हुआ, वो कर दिया। ये 'कथा प्रकाशन' काम कर रहा है। बहुत बड़ा काम किया।

सब कोई एक व्रत लेना। हम जीवन में एक, दो, तीन, चार, पांच औरत को, बालिका को साक्षर करेंगे। इससे बहुत बड़ा काम हो जाएगा

बंजारा समाज बहुत बड़ा समाज है। वो कोई अपना न्यूज लेटर निकाल सकता है। यहाँ बंजारा समाज का लोग बैठा है। एक भी कुआं बन जाए तो उससे सिंचाई हो सकता है। जब बरसात का पानी आता है, उसको पकड़ कर रखो। कुछ तकनीक लो। जो मिलता है वो रखो। भूमण्डलीकरण हार जाएगा जब वो देखेगा कि जिसको कुछ नहीं, जिससे सबकुछ छीन लिया है, वो तब भी जिन्दा है।

एक अन्तिम बात है। पुरुलिया में सबर मेला इसलिए शुरू किया था कि जब नाच-गाना होता है, नाच-गाना होने से बाहर का आदमी जो सबर से नफरत करता है, वो भी मेला देखने के लिए, आनंद के लिए आता है। उधर हाथ की चीजों का बहुत बिक्री होता है। एक मेला होने से वहाँ के समाज के साथ डी०एन०टी० का, जनजातियों का मेल-जोल हो जाता है, स्वीकारोक्ति बढ़ जाता है। तुम्हारे पास एक बहुत बड़ा आयुध है, एक हथियार है। बंजारा लोग में नाचना-गाना-बजाना यह सब बहुत है। एक मेला शुरू करो। बंजारा जिधर भी है एक मेला शुरू करो। बाहर का आदमी आएगा, देखेगा, रुचि लेगा। पंचमहाल में, मैं सबको बोलती हूं जो चल रहा है, मैं बहुत गौरवान्वित हूँ। जिधर भी डी०एन०टी० है, जहाँ भी 'बूधन' छापता है, वो मेला करो। वहाँ के साथ एका हो जाएगा। तुम दिल्ली में शुरू करो, छोटा-मोटा।

और क्या बोलने का है।

सब कोई एक व्रत लेना। हम जीवन में एक, दो, तीन, चार, पांच औरत को, बालिका को साक्षर करेंगे। इससे बहुत बड़ा काम हो जाएगा। □

"भारतवर्ष में घुमक्कड़ जातियों के भाग्य में दु:ख-ही-दु:ख बदा है। जनसंख्या बढ़ने के कारण बस्ती घनी हो गयी; जीवन-संघर्ष बढ़ गया; किसान का भाग फूट गया; फिर हमारे सिरकीवालों को क्या आशा हो सकती है। यूरोप में भी सिरकीवालों की अवस्था कुछ ही अच्छी है। जो भेद है, उसका कारण है - वहाँ आबादी का उतनी अधिक संख्या में न बढ़ना, जीवन-तल का ऊँचा होना और घुमक्कड़ जातियों का अधिक कर्मपरायण होना। यह सुनकर आश्चर्य करने की जरूरत नहीं है कि यूरोप के घुमक्कड़ वही सिरकीवाले हैं जिनके भाई-बन्द भारत, ईरान और मध्य एशिया में मौजूद हैं जो किसी कारण अपनी मातृभूमि भारत को न लौटकर दूर-ही-दूर चलते गये। ये अपने को 'रोम' कहते हैं जो वस्तुत: 'डोम' का अपभ्रंश है। भारत से गये उन्हें काफी समय हो गया। यूरोप में पन्द्रहवीं सदी में उनके पहुँच जाने का पता लगता है। आज उन्हें पता नहीं कि कभी भारत से आये थे। 'रोमनी' या 'रोम' से वे इतना ही समझ सकते हैं कि उनका रोम नगर से कोई सम्बन्ध है। इंग्लैंड में उन्हें 'जिप्सी' कहते हैं, जिससे भ्रम पैदा होता है कि इजिप्ट (मिस्र) से उनका कोई सम्बन्ध है। वस्तुत: उनका न रोम से सम्बन्ध है, न इजिप्ट से। रूस में उन्हें 'सिगान' कहते हैं। अनुसंधान से पता लगा है कि रोमनी लोग भारत से ग्यारहवीं-बारहवीं सदी में टूटकर सदा के लिए अलग हुए।"

- राहुल सांकृत्यायन

('घुमक्कड़ शास्त्र', पृष्ठ 46 पुस्तक से)

श्री लक्ष्मण गायकवाड़ मराठी के प्रसिद्ध लेखक हैं तथा साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित हैं। आपकी अनेक रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं। विमुक्त जनजाति में जन्मे श्री गायकवाड़ ने अपनी आत्मकथा 'उठाईगीर', जोकि हिन्दी में 'उचक्का' नाम से प्रकाशित हुई है, में मूलभूत सुविधाओं से वंचित इन समाजों का जीवंत वर्णन किया है। श्री गायकवाड़ इन जनजातियों के उत्थान के लिए सतत संघर्षरत हैं। इसी संघर्ष से जुड़ी हुई एक घटना इस लेख में वर्णित हैं।

पैठण में वडार जाति पर हमला

□ लक्ष्मण गायकवाड़

महाराष्ट्र में संतभूमि के नाम से जाने जाने वाले 'पैठण' गाँव में पहले कभी संत एकनाथ महाराज का वास्तव्य रहा था। इतना ही नहीं बल्कि संत ज्ञानेश्वर भी कभी पैठण में रह चुके हैं। संपूर्ण भारत से पैठण के बारे में जानने व तीर्थ क्षेत्र का दर्शन करने के लिए प्रति वर्ष बड़ी संख्या में भाविक वहाँ जाते हैं। इसलिए पैठण को पुण्यनगरी भी कहा जाता है। इसी पैठण में पहले कभी एक गधा गंगा के किनारे पानी के लिए तड़प रहा था। संत एकनाथ ने गंगा से जल लाकर उस तड़पते हुए गधे को पिलाया था। यह कहानी महाराष्ट्र के बच्चे-बच्चे को ज्ञात है। इतना सब इसलिए कहना पड़ रहा है कि सैकड़ों साल पहले कभी मानवता निभानेवाले इसी गाँव में आज विपरीत घटना घट गई है। पैठण गाँव के निकट 'विहा मांडवा' में 'वडार' नाम की एक खानाबदोश जनजाति रहती है। वे कई सालों से इस गाँव में बसे हुए हैं।

एक दिन की बात है। 29 जून की सुबह गाँव के बाहर बसी हुई वडार बस्ती को गाँव के मुखिया के साथ हमलावारों ने आग लगाकर नेस्तनाबूत कर दिया। स्त्रियों-बच्चों और बूढ़ों को बुरी तरह से जख्मी कर दिया। वडार बस्ती में जो-जो वस्तुएँ थीं जैसे रेडियो, बर्तन, बकरियाँ-मुर्गियाँ गाँव के वे लोग लूटकर ले गए। इस हमले से वडार बस्ती के सभी लोग डर के मारे अपनी जान हथेली पर रख दूसरे गाँव में भाग गए।

दूसरे दिन विमुक्त और ख़ानाबदोश संगठन के कार्यकर्ता शिवाजी शेलार को इस हमले का पता चला। कुछ डी एन टी कार्यकर्ताओं के साथ वे पैठण, विहा-माँडवा पहुँच गए। गाँव में जाने के बाद पता चला कि गाँव के लोगों ने वडार बस्ती पर सामूहिक हमला क्यों बोला था। वडार बस्ती में रहनेवाले लोगों ने सूअर भूनकर खाने के बाद गाँव के मुखिया के कुएं का पानी पिया था। इस घटना से क्रोधित होकर सवर्ण लोगों ने यह कहते हुए कि 'सूअर खाने वाली इस वडार जाति ने हमारे कुएं का पानी पीकर उसे भ्रष्ट किया' इन पर हमला बोल दिया।

सही मायने में देखा जाए तो पैठण जैसे संतों के रहने वाली भूमि में शूद्र मानी जाने वाली वडार जाति के लोग जो हिन्दू ही हैं ने पानी पिया, इस कारण को लेकर उनका संपूर्ण जीवन अस्तव्यस्त कर देना, यह क्या बात हुई? हिंदू मान्यता के अनुसार वराह (सूअर) ईश्वर का ही एक अवतार माना जाता है, तो भगवान का अवतार लिए हुए इस पशु को खाने के बाद हिंदू समाज और उनका पानी कैसे भ्रष्ट होता है? यह बात हमारे समझ के बाहर है। इसी बहाने एक बात पता चली है कि हिंदू का दुश्मन और कोई नहीं, बल्कि हिंदू ही है जो अति शूद्र हिंदू को वर्ण व्यवस्था में दबाकर रखने की साजिश कई सालों से करता आ रहा है, जो पैठण की इस घटना के बाद और भी दृढ़ हो गया है।

इस घटना के बाद हमारे डी एन टी के संगठन ने संपूर्ण महाराष्ट्र में शोर मचाया। 19-20 हजार लोगों के साथ औरंगाबाद में रैली निकालकर इस घटना का निषेध किया और गुनहगार लोगों को मुखिया के साथ जेल भिजवाया। बात यहीं पर ख़त्म नहीं होती। विमुक्त और घुमंतू जनजाति के लोग महाराष्ट्र में 'ओ बी सी' में रहने के कारण अनुसूचित जनजाति के अंतर्गत केस न बन पाने से इतनी बड़ी दुर्घटना होने के बाद भी सरकार उसका मुआवजा नहीं दे सकी। हमने इस बारे में जिला अधिकारी को आवेदन पत्र देकर इन सभी के पुनर्वसन की बात छेड़ी तथा यह माँग भी की कि 'आज़ादी के पचास साल बाद भी महाराष्ट्र जैसे प्रांत में ऐसी घटना होना मानवता पर एक कलंक है जो दुबारा न हो। इस लिए सरकार को कुछ ठोस कदम उठाने चाहिए।'

महाश्वेता देवी, लक्ष्मण गायकवाड़, डॉ० गणेश देवी के नेतृत्व में चलने वाली 'डी नोटीफाईड, नोमॅडिक ट्राईबल्स राईट्स ऍक्शन ग्रुप' ने इस घटना का निषेध कर इस बात को बड़ोदरा में हुए सेमिनार में उठाकर भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री वेंकटचलैया जी से भी निवेदन कर इस घटना के बारे में केंद्र सरकार से जवाब माँगा है।

जानी मानी लेखिका, पत्रकार व सक्रियतावादी शांति किन्डो का जन्म जिला पलामू (झारखण्ड) के आदिवासी परिवार में हुआ। उनका कार्य क्षेत्र पलामू ही है। यहां वे आदिवासी महिलाओं व बच्चों के मानसिक, शारीरिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास हेतु कार्य कर रही हैं। इन्हीं उद्देश्यों को समर्पित पलामू की संस्था 'महिला शिल्प भवन' की वे अध्यक्ष भी हैं

पलामू में विलुप्त हो रही आदिम जनजाति-परहिया

☐ शांति किन्डो

पलामू पृथ्वी का प्राचीनतम भूखंड है। इस इलाके के प्रथम मूल निवासी थे आदिम जनजातियों के लोग। इनमें एक मुख्य जनजाति है परहिया। परहिया द्रविड़ आदिवासी हैं। वे मूल रूप से पलामू में ही रहते आए हैं। उनकी अच्छी खासी आबादी थी। वे डालटनगंज के उत्तर की तरफ पलामू के दक्षिणी टप्पा और गांवों में बसते हैं।

परहिया के एक प्रसिद्ध युद्ध गीत का अर्थ है—"भागो, भागो, देवशाही आ रहा है और हम उससे मुकाबला नहीं कर सकते।" देवशाही पलामू पर आक्रमण कर रही सेना के नायकों में से एक थे।

परहिया अधिकांशत: जंगलों तथा कुछ लोग मैदानी इलाकों में बसते हैं। खेती की उपज, मधु संग्रह, लाह/लाख और वन उत्पाद उनकी जीविका के साधन रहे हैं। इन चीजों को व्यवसायियों को देकर बदले में वे अनाज, निमक (नमक) तम्बाकू और कपड़ा लेते हैं।

परहिया साधारण, सरल, ईमानदार, विश्वासी और स्पष्टवादी लोग हैं। वे कठोर परिश्रमी होते हैं। उनका औसत कद 5 फीट 3 इंच है। उनका चेहरा बड़ा और चौड़ा होता है।

परहिया में सजातीय भावना बहुत प्रबल होती है। वे दूसरों का बना भोजन नहीं खाते। अकाल के दिनों में परहिया लोगों ने बना भोजन नहीं खाया, बल्कि अनाज लिया और स्वयं बनाकर खाया। वे सुबह महुआ का लुकमा (नाश्ता) और सत्तू का कलेवा (भोजन) लेते हैं। रात का 'भोजन सूर्यास्त के बाद करते हैं। खाने के मामले में उनका विश्वास शुद्धता, स्वच्छता और पवित्रता पर ज्यादा है।

उनका भोजन महुआ-बीज के तेल से पकता है। बांस रगड़कर आग जलाते हैं। जंगल में सब तरह के खाद्य पदार्थ ढूंढ़ लेते हैं। शिकार खेलने से जो पशु मिलते हैं उनका मांस भी खाते हैं। पलाश, सखुआ, महुआ, महुलान आदि के पत्तों के थाल में भोजन करते हैं। बुजुर्गों को पहले भोजन दिया जाता है। इनके प्रति बहुत आदर भाव है। पति ढाबा में बच्चों के साथ खाते हैं। रसोई स्थल पर पत्नी सबसे अंत में खाती है। प्रतिदिन दो बार भोजन होता है।

विवाह के लिए लड़की के पिता के पास अगुआ आता है। स्वीकृति मिलने पर डाली में रुपया दिया जाता है। आठ दिनों के बाद लड़की के पिता लड़के के पिता के पास जाते हैं। ब्राह्मण की सलाह पर विवाह की तिथि तय होती है। मड़ा गड़ाता है। पानी से भरे दो कलश होते हैं। नाच-गान होता है। पत्तों-फूलों से घर सजाया जाता है। स्त्री-पुरुष प्राकृतिक गहने पहनते हैं। परहिया औरतें शादी के पूर्व हाथ, गला, छाती और पैरों में गोदना कराती हैं।

परहिया में शादियाँ प्राय: 12 और 14 वर्ष की उम्र में होती हैं। सक्षम पति बांझ पत्नी होने पर दूसरी शादी करता है। यदि दो पत्नियाँ सगी बहनें होती हैं तो बड़की और छोटकी कहलाती हैं। राजी होने पर आपस में तलाक होता है

और पति एवं पत्नी दूसरी शादी करते हैं। विधवा भी शादी करती है। प्रसव काल में चमइन 10 दिन साथ में रहती है। छट्ठी मनाई जाती है। बच्चे का नामकरण ब्राह्मण करते हैं।

बीमारी में जंगल से जड़ी-बूटी आती है। अंग्रेजी दवा पैसे के अभाव में वे नहीं खरीदते। मृत्यु के बाद शव को जलाया जाता है। उनकी श्रद्धा धरती और मुचुकरानी में है। मुचुकरानी गांव के विशाल पेड़ के नीचे रहती है, ऐसी मान्यता उनमें है। वे मानते हैं कि देवी माई अच्छाई की देवी हैं। परहिया को प्रकृति से गहरा प्रेम है।

इस आदिम जनजाति परहिया को बचाने का उपाय यह है कि समयबद्ध सम्पूर्ण मास्टर प्लान बनाकर इनके विकास और राहत के लिए युद्ध स्तर पर कार्य किया जाए। इन्हें वन एवं वन उपज पर हक दिलाया जाए। फलदार वृक्षों का रोपण हो। उन्हें भूमि, आवास और रोजगार मुहैया कराया जाए

परहिया की आबादी 1960 में 7,107 थी, जो 1978 में घटकर 4, 308 हो गई। 1978 में 'मेसो प्रोजेक्ट' के तहत इनकी जनगणना कराई गयी थी। इनकी साक्षरता 0.37 प्रतिशत है। मलेरिया और डायरिया से अधिक मौतें होती हैं। भोजन और दवा का अभाव, नशाखोरी, गरीबी, बेरोजगारी, ऋणग्रस्तता, अंधविश्वास, अशिक्षा और जागृति की कमी उनकी आबादी के घटने के अन्य कारण हैं। वे प्राय: भूमिहीन और आवासविहीन हैं। टांड-टुगरी भूमि में थोड़ा बहुत तुसर, कुरथी, मडुआ, गोड़ा धान उपजाते हैं। मजदूरी करते हैं। दिनचर्या पेट भरने में ही बीत जाती है। वे आदिम उपाय में रहते हैं। भूख से बिलबिलाते हैं। जीना एक युद्ध की तरह है। उनका कोई साक्षर प्रतिनिधित्व भी नहीं है। आर्थिक सुरक्षा और स्थायित्व नहीं है।

परहिया बहुल एक गाँव है मुसड़िया। बरवाडीह मार्ग में, डालटनगंज से करीब 11 कि० मी० पर। यहां परहिया के 35 घर हैं। आजादी के 54 वर्षों बाद भी यहां अभाव ही अभाव है। सिर्फ कागजी विकास हुआ है। सड़क टूटी है। लोग पगडंडी से आते-जाते हैं। चापाकल खराब है। परहिया टोला में कुआं नहीं है। करूनवा नाले में प्रदूषित पानी है। स्कूल में बहुत कम छात्र पढ़ते हैं। ज्यादा बच्चे पशु चराते हैं। पेंशन, राशन कार्ड, लाल कार्ड, इंदिरा आवास आदि सरकारी लाभ से अनेक लोग वंचित हैं।

गांव के बाहरी लोगों को यहाँ बहुत जमीन बंदोबस्त की गई है। मगर गांव के 22 भूमिहीनों को गाँव से दूर जंगल में 50-50 डिसमिल जमीन का परचा दिया गया है। 11 वर्ष बीत गए, लेकिन उन्हें अभी तक नहीं पता कि उनकी जमीन है कहाँ?

इस गाँव में चक्रीय विकास की तीन तल्ला खेती की योजना का प्रयोग विफल हो गया है। लोग कैदा-गेठी खाते हैं। 'नेशनल वेस्ट लैंड डेंवलपमेंट बोर्ड' के तहत 8,0,8,677.80 रु. (आठ लाख आठ हजार छ: सौ सत्तहत्तर रुपये अस्सी पैसे) खर्च किए गए, मगर भुसड़िया गांव को लाभ नहीं मिला। गांव के दुर्लभ आदिम आदिवासी परहिया कब सम्मान के साथ जिएंगे, यह प्रश्न सामने है।

इस आदिम जनजाति परहिया को बचाने का उपाय यह है कि समयबद्ध सम्पूर्ण मास्टर प्लान बनाकर इनके विकास और राहत के लिए युद्ध स्तर पर कार्य किया जाए। इन्हें वन एवं वन उपज पर हक दिलाया जाए। फलदार वृक्षों का रोपण हो। उन्हें भूमि, आवास और रोजगार मुहैया कराया जाए।

ब्रिटिश काल में 1871 में एक काला कानून बना था भारत का अपराधी जनजाति अधिनियम, जिसे 1910 एवं 1920 में भी जारी रखा गया। वह कानून आजाद भारत में आज भी चलन में है। इस कानून के तहत परहिया समेत कुछ आदिवासी जातियों को अपने क्षेत्र में अपराधी जाति माना गया। वे अपराध करें या नहीं करें, कोई सबूत हो या नहीं, लेकिन मान लिया जाता है कि अपने क्षेत्र में अपराध इन्होंने ही किया है। महाश्वेता देवी इस कानून के खिलाफ लम्बी लड़ाई लड़ रही हैं। □

पाठा के आदिवासी 'कोल'

□ डा० स्वामी प्रसाद गुप्ता

समाज की जीवंतता एवं उसकी गति का राज परिवर्तन है। हो सकता है कहीं इसका स्वरूप सामाजिक प्रगति के रूप में हो तो कहीं आर्थिक विकास के रूप में। सामाजिक एवं आर्थिक विकास की गतिशीलता में मानव की अहम् भूमिका होती है, भले ही इसका प्रभाव कुछ कम हो। यहाँ पर यह चिन्तन करने की आवश्यकता नहीं है कि समस्त मानवीय स्थलों पर विकास की गति एवं प्रगति समान ही हो। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कई कारकों का (सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, तकनीकी, शिक्षा एवं राजनीतिक) प्रभाव परिलक्षित होता है।

आज के वैज्ञानिक युग में जहाँ मानव प्रगति कर दूरस्थ स्थित स्थानों की खोज में प्रयत्नशील है, सागरीय क्षेत्रों में खोज कर आवासीय व्यवस्था को ठीक करने में व्यस्त है, वहीं 'पाठा' क्षेत्रों के कोल अपने जीवन की सुरक्षा, अस्मिता एवं दो समय की रोटी के लिए रात और दिन एक किये हुए हैं।

'पाठा क्षेत्र' नवसृजित जनपद चित्रकूट का दक्षिणी पठारी भाग है। इसकी अवस्थिति 24°-35′ से 25°-65′ उत्तर तथा 79°-59′ से 81°-34′ पूर्व है। शाहू जी महाराज जनपद का मुख्यालय कर्वी तथा मण्डलीय मुख्यालय चित्रकूट धाम बांदा है। मण्डलीय मुख्यालय बांदा से दक्षिण पूर्व में यह पाठा क्षेत्र लगभग 700 किमी. में फैला हुआ है। इस क्षेत्र का प्राकृतिक विभाजन पैशावनी नदी द्वारा होता है। पाठा क्षेत्र के दक्षिण एवं दक्षिण पूर्व में मध्य प्रदेश प्रान्त के जनपद रीवाँ, सतना तथा पन्ना इसके सीमा का निर्धारण करते हैं। मानिकपुर विकास खण्ड पाठा क्षेत्र के अन्तर्गत पूरी तरह से सम्मिलित किया जा सकता है। यदि हम कोलों के बसाव क्षेत्र पर दृष्टिपात करें तो मानिकपुर विकास खण्ड के अतिरिक्त मऊ क्षेत्र की आठ ग्राम पंचायतें सम्मिलित की जा सकती हैं। जबकि तीन ग्राम पंचायतों में शत-प्रतिशत कोलों का बसाव है।

कोलों (कोल जनजाति) की उत्पत्ति के सम्बन्ध में तरह-तरह की मान्यताएं हैं। साहित्य से लेकर मानव शास्त्रियों तक ने अलग-अलग मत प्रस्तुत किये हैं। संस्कृत साहित्य में **'कोल'*** शब्द का अर्थ **'गन्दे व्यक्ति'** से लगाया जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस में **'कोल'** शब्द का प्रयोग किया है, जिसे निम्न स्तरीय व्यक्ति अथवा **'नीच व्यक्ति'** के रूप में जाना जाता है। **हैडन महोदय** ने कोल जनजाति को द्रविण प्रजाति का माना है। अत: उनके अनुसार कोलों के पूर्वज द्रविण हो सकते हैं। यहाँ पर यह उल्लेख किया जा सकता है कि जब भारत के उत्तरी भाग विशेषकर गंगा-यमुना दोआब में आर्यों का आगमन हुआ था, तब इस क्षेत्र के द्रविण दक्षिणी पठारी प्रायद्वीपीय भाग की ओर पलायन कर गये थे। जो द्रविण आर्यों द्वारा पकड़ लिये गये थे, दास

पाठा क्षेत्र के 75 प्रतिशत कोल भू-विहीन है। शेष 25 प्रतिशत कोल अधिकतम 2 एकड़ का भू-स्वामित्व रखते हैं। वैसे भूमि कोलों की प्रतिष्ठा से जुड़ी हुई है, क्योंकि भू-स्वामित्व प्राप्त करने के लिए अधिकांश कोल प्रयत्नशील रहते हैं। लेकिन आर्थिक स्तर अच्छा न होने के कारण भूमि प्राप्ति मात्र दिवास्वप्न रह जाती है

बना लिया गया था। हो सकता है ये वही द्रविण हों जो आज पाठा क्षेत्र में **'कोल'** नाम से जाने जाते हैं। कोल की ही भाँति **'मुण्डा'** जनजाति को **'कोरार'** नाम से पुकारा जाता है, जो आगे चलकर कोल शब्द से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ दन्त कथा प्रचिलित है जिनमें **'कुक'** के अनुसार चन्द्रवंश के पांचवे शासक **'ययाति'** ने पांच पुत्रों में अपने राज्य का बंटवारा किया था। उनका एक पुत्र जिसका नाम **'तुर्वश'** था, उसने दक्षिणी भाग प्राप्त किया था। **'तुर्वश'** के दशवे वंशज में चार बेटे हुए जो क्रमश: **पन्डया, फोरला, चोला और कोल** नाम से जाने गए। कोल की ही सन्तानों को आज कोल नाम से जाना गया है।

जब कोलों से उनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में पूछा जाता है तो वे अपने आपको **'शबरी'** (जिसका उल्लेख रामचरित मानस में मिलता है) की सन्तान के रूप में बताते हैं। हो सकता है, जैसा कि गोस्वामी तुलसीदास ने शबरी को अछूत औरत के रूप में प्रस्तुत करते हुए रामचन्द्र जैसे तेजस्वी एवं

*** इस लेख में जगह-जगह शब्दों का मोटा टाइप लेखक का अपना चयन है।**

चरित्रवान व्यक्ति को उसके हाथों जूठे बेर खिलाकर, छुआछूत को दूर करना चाहा हो और उन्होंने अपनी कृति में इन्हीं कोलों का उल्लेख किया हो। फिर भी कोलों की उत्पत्ति का कोई मूल रूप प्राप्त नहीं होता है। वैसे इन्हें द्रविण वंशज ही कहा जा सकता है। वर्तमान समय में कोल हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार अपने आपको समायोजित करते हैं। देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना करते हैं। इनकी अपनी भाषा है। वैसे हिन्दी भाषा को अच्छी प्रकार से बोलते एवं समझते हैं।

आर्थिक एवं सामाजिक स्तर

पाठा क्षेत्र के 75 प्रतिशत कोल भू-विहीन है। शेष 25 प्रतिशत कोल अधिकतम 2 एकड़ का भू-स्वामित्व रखते हैं। वैसे भूमि कोलों की प्रतिष्ठा से जुड़ी हुई है, क्योंकि भू-स्वामित्व प्राप्त करने के लिए अधिकांश कोल प्रयत्नशील रहते हैं। लेकिन आर्थिक स्तर अच्छा न होने के कारण भूमि प्राप्ति मात्र दिवास्वप्न रह जाती है। जिन कोलों के पास भूमि है, वे भी बहुत अच्छी कृषि नहीं कर पाते हैं, क्योंकि उनके पास कृषि योग्य उन्नतिशील उपकरण, बीज, उर्वरक तथा सिंचाई के साधनों का पूर्णतया अभाव रहता है। फलस्वरूप पाठा के कोल मजदूरी करने के लिए बाध्य होते हैं। यह क्षेत्र पूर्णतया ऊबड़-खाबड़ है। अत:आवागमन के साधनों की कमी है। ये लोग दैनिक मजदूरी हेतु विकसित क्षेत्रों से कोसों दूर रहते हैं। फलस्वरूप अपने कठोर श्रम को सस्ते दामों पर बेचने के लिए बाध्य होते हैं। पाठा क्षेत्र में फसल कटाई के समय को छोड़कर शेष समय अंशकालिक कार्य ही मिलता है, जिससे दोनों समय का भोजन भी जुटा पाना कठिन होता है। इनका मुख्य कार्य पत्थर तोड़ना एवं लकड़ी काटना है।

'कोलो' में शिक्षा का पूरी तरह अभाव है। फलस्वरूप इन्हें अपने भले-बुरे का ज्ञान नहीं रहता है। दूसरे क्षेत्रों के लोग इन भोले-भाले कोलों को बहला-फुसलाकर अन्यत्र बंधुआ मजदूरी हेतु ले जाते हैं। इनका जीवन स्तर अच्छा नहीं है। **'चैपिन'** ने कहा था कि **''परिवर्तन कड़ियों की शृंखला से बंधी हुई चक्रीय गति में होती है''** वहीं कोलों का सामाजिक परिवर्तन एवं संरचना की कड़ी शिक्षा के अभाव में अवरुद्ध होकर रह गयी है। इस क्षेत्र में कोलों की उन्नति एवं शिक्षा तथा जागृति पैदा करने हेतु बहुत से समाज के ठेकेदार आये लेकिन जागृति पैदा करना तो दूर रहा वे इनके शोषक बन गये। इनका मुख्य उद्देश्य यही रहा कि कोल सदैव पिछड़े बने रहें ताकि इनसे मजदूरी का कार्य सस्ते श्रम के रूप में कराया जा सके। वन काटने एवं पत्थर तोड़ने के लिए सदैव मजबूर रहें। परिणामस्वरूप ये शुभचिन्तक निरीह कोलों को हमेशा शिक्षा से वंचित करने का प्रयास करते रहे। कोलो के पिछड़ेपन के निम्न कारण हैं:-

1. वनों के ठेकेदार तथा पत्थर तोड़वाने वाले साहूकार कोलों से सस्ते श्रम पर मजदूरी करवाते हैं।

2. धार्मिक संस्थाओं ने सुधार एवं धर्म परिवर्तन के नाम पर कोलों के बीच कार्य करना प्रारम्भ किया। धार्मिक कार्य के साथ ही साथ इन्होंने कृषि योग्य भूमि खरीदकर खेती का कार्य प्रारम्भ कर दिया। इनकी खेती का कार्य 'कोल' ही करते हैं। अत: यह संस्थाएं अप्रत्यक्ष रूप से इनके प्रशस्त मार्ग में अवरूद्धता उत्पन्न कर रही हैं।

3. वन विभाग के अधिकारी एवं कर्मचारी भी कोलों से सस्ते दर पर कार्य करवाते हैं। यदि ये सरकारी कर्मचारी ईमानदारी से सरकारी दर की मजदूरी उपलब्ध करायें तो इनकी आर्थिक स्थिति में सुधार किया जा सकता है। किन्तु अशिक्षित कोल इस ओर से बेखबर हैं तथा भविष्य में भी रहेंगे।

4. पाठा क्षेत्र असमतल होने के कारण विकास कार्यों से सम्बद्ध कर्मचारी एवं अधिकारी कोलों के बीच तक नहीं पहुंच पाते हैं। अत: इस क्षेत्र में विकास कार्यों का पूर्णतया अभाव है। यदि इस क्षेत्र में डी आर डी ए तथा जेरोयो योजना के तहत कार्य कराएं जाएं तो पाठा क्षेत्र को विकसित किया जा सकता है।

5. यातायात एवं संचार की सुविधाओं का पूरी तरह अभाव है। आवागमन के साधनों के अभाव के कारण कोल विकसित क्षेत्रों एवं सभ्य समाज से कटे हुए हैं। अत: इस क्षेत्र में आवागमन एवं संचार की सुविधाओं को विकसित करना नितान्त आवश्यक है।

6. कोलों का सुसंगठित न रह पाना इनकी हीनता का मुख्य कारण है। इन्हें संगठित रहने हेतु शासकीय प्रोत्साहन दिया जाना आवश्यक है। सुरक्षा के अभाव के कारण कोल सदैव विचलित रहते हैं। अत: इन्हें सुरक्षा प्रदान करना होगा तभी कोल इस क्षेत्र में रह पाएंगे।

7. इस क्षेत्र के राजनीतिक व सामाजिक प्रतिनिधियों से कोलों के विकास के लिए संघर्ष करना चाहिए।

उपरोक्त अवरोधक कारकों पर एक विहंगम दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि कोलों में विकास एक समस्या बनी हुई है जिसे संरचनात्मक प्रकार्यवाद से समझने का प्रयास किया जाना चाहिये। इसी परिपेक्ष में कोल जनजाति का सूक्ष्म अध्ययन कर इनके विकास का प्रयास करना होगा।

(डॉ० स्वामी प्रसाद राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हमीरपुर में समाजशास्त्र विभाग में लेक्चरर हैं।)

(हमारे देश में घुमन्तू एवं भटके हुए लोग आजादी के 55 साल बाद आज भी नागरिक अधिकारों से वंचित है। सदियों से भटकते इन घुमन्तू लोगों का कोई स्थायी निवास नहीं है। एक दशक पूर्व युवा वकील रतन कात्यायनी ने समाज में इन जनजातियों की पहचान एवं उनके आत्मसम्मान के लिए कार्य करने का प्रण लिया और 'मुक्तिधारा' नामक संस्था के माध्यम से इस अभियान में जुट गए। रतन कात्यायनी ने अरावली के बंजारा, नट, गाड़िया लोहार, भोपा, बावरिया तथा कालबेलिया जातियों के बीच कार्य प्रारम्भ किया। इनमें नट, बावरिया और कालबेलिया ब्रिटिश शासन में तथाकथित अपराधी जनजाति की सूची में में शामिल किए गए थे। आज श्री कात्यायनी के अनथक परिश्रम के फलस्वरूप बीस हजार से ऊपर घुमन्तू एवं भटके हुए लोगों को बसाया जा चुका है। इस कार्य के दौरान रतन कात्यायनी के ऊपर कम से कम आधे दर्जन बार हमले हुए, उनको बुरी तरह से पीटा गया तथा उनकी बांह की हड्डी तोड़ दी गई। अपने उद्देश्यों को समर्पित रतन कात्यायनी को जेल भी जाना पड़ा। प्रस्तुत आलेख में इसी मुक्ति अभियान की एक झलक मिलती है।)

अरावली में घुमन्तू कबीलों का मुक्ति अभियान

☐ रतन कात्यायनी

शताब्दियों से प्रेम, सहिष्णुता तथा मानवीय मूल्यों को समाज में घुमन्तू जीवन बसर करने वाले कबीलों ने सदैव संरक्षण दिया है। जिसके लिए उनका विचरण परस्पर समन्वय स्थापित करने में सहायक रहा। जब राष्ट्र में संचार और समन्वय के कोई विकसित स्रोत नहीं थे तब जंगलों-जंगलों, गाँवों-गाँवों में विचरण करने वाली इन विविध जातियों और समुदायों ने ही सामाजिक न्याय, राष्ट्रीय प्रेम और मानवाधिकारों को संरक्षण दिया, अपनी विकास नीति, जानकारियों, एक सांस्कृतिक धरोहर को सुरक्षित रखते हुए।

मुगलकाल के अवसान और ब्रिटिशकाल के प्रारम्भ के दिनों में बाहरी शक्तियों द्वारा सांस्कृतिक धरोहर पर होने वाले आतंकपूर्ण षड्यंत्रों ने भारत की इन जातियों को विरोध करने के लिए विवश कर दिया। फलस्वरूप 1857 के प्रथम आजादी आंदोलन में यायावर जातियों ने अपनी अस्मिता और राष्ट्रीयता के संरक्षण के सवाल पर अस्तित्व उजागर करने की सार्थक भूमिका निभाई। इसी का परिणाम था कि राष्ट्र के प्रति इनके अटूट लगाव को देखकर ब्रिटिश हुकूमत ने भारत की इन वीर जातियों को 'क्रिमीनल ट्राइब्स' अर्थात अपराधिक जनजाति घोषित करने का अधिनियम तक बना डाला। इस सब घटना के पीछे उच्चस्तरीय अपराधिक षड्यंत्र रचा गया। इस अमानवीय घटना ने ब्रिटिश हुकूमत की ही नहीं बल्कि भारत की सवर्ण जातियों और प्रभावी समुदायों की मानवीय सोच ही नहीं रहने दी।

ब्रिटिश हुकूमत ने अपने आगमन के चन्द दिनों में इस तथ्य को भली प्रकार आत्मसात कर लिया था कि भारतीय समाज जातियों, धर्मों और साम्प्रदायिक भेदभाव के साथ ही चलता रहा है और इन्हीं मुद्दों को शासन की रणनीति का अंग बनाया जा सके तो अधिकांश भारतीयों की राष्ट्रीय भावना को बदला जा सकता है। इस सोच में ब्रिटिश हुकूमत बहुत सफल रही। राष्ट्र को समर्पित यायावर जातियों को भारतीय समाज के हाशिए पर लाने के लिए उन्हें इसी सोच से मदद मिली।

लम्बी यात्रा के दौरान देश में यही हुआ कि भारतीय नागरिक ही भारतीय नागरिक के विरोधी बन बैठे। और मानवीय मूल्यों पर जीने वाले यायावर कबीलों के सबसे बड़े शत्रु समाज के वही लोग बने जिनके पास पूंजी है सत्ता है और सारी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। यह यथार्थपूर्ण सामाजिक विश्लेषण समूचे देश का है।

किंतु देश के उत्तर-पूर्वी अरावली की तलहटी के परिवेश में पिछले एक दशक से यायावर कबीलों का एक कोना बना है। यहाँ अपमान, विवशता और लाचारी ही नहीं बल्कि शासन और समाज का पिछली कई सहस्राब्दियों का सहभागी

हाशिए पर कौन ?

आज देश के लगभग 6 लाख गाँवों का स्पष्ट चित्र है। गाँव दो भागों में बँटा है- गाँव का एक अगड़ा स्थान है जहाँ बिजली, पानी, सड़कें, सफाई, बाजार, बड़े भवन, संचार के साधन और हर सुविधा है तथा गाँव के धनी पूँजीपति यहाँ रहते हैं। उनकी महिलाएं कभी कोई श्रम नहीं करतीं, बच्चे सुविधाओं से अठखेलियां करते हैं। समूचा गाँव यहाँ हाथ जोड़े पहुँचता है। सम्मान है यहाँ, धन-धान्य है यहाँ, यहाँ सब कुछ है- सवर्ण बस्ती।

दूसरा गाँव का पिछड़ा स्थान है- जहाँ सारे गाँव की गन्दी नालियाँ पहुँचती हैं। यहाँ टूटी झोपड़ियाँ हैं, गन्दा पानी है, बीमार लोग हैं और अपमानित और निराश बुझे हुए चेहरे हैं। यहाँ की माँ-बहिनें रात के अन्धेरे में जागती हैं और सारे गाँव में सन्नाटा छाने के बाद देर रात सोती है। भोर से दिन छिपे तक पशुओं की तरह कड़ी मेहनत के बाद रात को भूखी सोने की विवशता जिनके पक्ष में खड़ी रहती हैं। जिनके तन पर कपड़ा लत्ता नहीं, झोंपड़े पर फूस नहीं, बीमार बच्चे की कोई दवा नहीं, जहाँ कोई हाथ जोड़ने वाला आता नहीं है। अव्वल तो गाँव के अगड़े हिस्से का कोई धनवान व्यक्ति इस हिस्से में आता ही नहीं है और यदि कभी-कभी आता भी है तो इस बस्ती की अभागी युवती के साथ अपनी हवस मिटानी होती है...बलात्कार, भूख, अन्याय, भय, अमानवीय घटनाएँ, अपमान, लाचारी बेबसी इस परिधि में साम्राज्य बनाये रहती हैं- दलित बस्ती।

मुक्तिधारा के बैनर तले अरावली की तलहटी में कुछ गाँवों में इन दो बस्तियों से अलग एक तीसरा कोना और बना है। पिछड़ी बस्ती से भी दूर...गाँव के कोने से भी दूर...समाज की धारा से भी दूर...हाशिए पर! हाशिए पर!!

षड्यंत्र मानवीयता के गलियारे में स्पष्ट झलकता है। 'मुक्तिधारा' ने अरावली में मुक्ति का महा-अभियान चलाकर इन बेबस लाचार भाई-बहिनों में अभूतपूर्व विश्वास जगाया है। घुमन्तू कबीलों के समुदायवासी पिछले सैकड़ों वर्षों से विकास, ग्रामीण परम्पराओं, सामाजिक रीति-रिवाजों और सामाजिक मान्यताओं से सर्वथा अनभिज्ञ रहे हैं।

अरावली में स्वावलम्बनमयी स्थायी सामाजिक पुनर्वास बनाकर राष्ट्रीय विकास की मुख्य धारा में सम्मिलित होने का सपना संजोकर आगे आ रहे घुमन्तू कबीलों को लम्बे समय से सामाजिक रिश्तों की विशेष जानकारी नहीं है। न समाज से इन्हें सरोकार है, न इन्होंने समाज से कोई पहल की। शासन के गलियारे से कोसों दूर रहने वाले इन समुदायों की सामाजिक न्याय व्यवस्था एवं परम्पराओं का सिलसिला मानवोन्मुखी है।

विश्व के बाजार, विकास और दैनिक जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित, बेखबर इन जातियों/समुदायों ने जब-जब मानवीय सपने संजोये और समाज में आगे आने का प्रयास किया तब-तब भारतीय समाज के ठेकेदारों, समृद्ध लोगों ने शोषण, दमन और अत्याचार का सिलसिला और अधिक तेज किया। किन्तु यह समुदाय अपनी ही मान्यताओं में जीता रहा और समाज में कहीं भी नहीं रुका-बसा। इसीलिए विविध षड्यंत्रों के जरिए इन्हें सताने का अभियान इक्कीसवीं शताब्दी में भी जारी है। इसी अंतराल और प्रतिक्रिया के चलते इन समुदायों का सभ्य समाज से रिश्ता और सम्पर्क नहीं बन सका। किन्तु प्राकृतिक संसाधनों, नदियों और पर्वतमालाओं की ऊँची चोटियों और झरनों के साथ इनके दिल के सम्बन्ध बने हैं। घुमन्तू जीवन को 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में यदि किसी ने संरक्षण दिया तो एक मात्र प्रकृति ने। प्राकृतिक संसाधनों से लगाव के सहारे से यायावर कबीले इस अंतराल में संरक्षण पाए और जीवित रहे।

दुनिया की सर्वाधिक प्राचीन अरावली पर्वतमाला में जल, स्थल, पशुओं का चारा और शान्ति इन्हें वरदान के रूप में मिली है। इसी को जीवन का सहारा मानकर इस समुदाय ने अरावली में आगे बढ़ने की हिम्मत संजोयी है। यहाँ इस समुदाय ने इच्छा के अनुसार सीमित संसाधनों के सहारे जीवन गुजार लिया है।

सिर पर लाश

राजस्थान के उत्तरपूर्वांचल में प्रदेश की राजधानी जयपुर और देश की राजधानी के बीचोंबीच सरिस्का अभयारण्य से जुड़ा एक गाँव है हल्दीना। हल्दीना गाँव में बंजारा समाज के 150 परिवारों ने अपनी जिन्दगी मानवीय बनाने की गरज से एक सपना संजोकर 1991 में रणजीता चौहान के नेतृत्व में स्थायी सामाजिक पुनर्वास बनाया था। जातियों, धर्मों की लड़ाई में फँसा स्थानीय समाज पहले तो इनके लिए दूर-दूर तक यह प्रचारित करता रहा है कि ये बंगलादेशी लोग यहाँ हल्दीना में आ गए हैं। इनको भगाओ। और जब स्थानीय समाज के विरोध के बावजूद ये कबीलेवासी नहीं हटे और संयोगवश दो माह के उपरान्त 81 वर्षीय सेठ पलीवाल मुखिया की स्वाभाविक मौत हो गई तो सारे हल्दीना गाँव के महिला-पुरुष राजनैतिक पूँजीपतियों के इशारे पर न केवल इनका विरोध करने आ गये बल्कि मृतक सेठा का दाह संस्कार भी इस गाँव में नहीं करने दिया। परिणामस्वरूप सेठा पलीवाल की मृत देह को लेकर सभी समुदायवासी दूर-दूर तक इस अवसर की तलाश में लाश को सिर पर लिए-लिए फिरते रहे कि कहीं उसे मिट्टी देने का अवसर मिले। परन्तु इससे बड़ा हादसा क्या होगा कि इस देश की धरती में देश के ही सेठा पलीवाल को मरने के बाद भी एक गज जमीन न मिल सकी।

इस अमानवीय घटना का सबसे शर्मनाक पहलू यह रहा कि लोक कल्याणकारी सरकार के पहरेदार इस सारे घटनाक्रम को खुलेआम देखते रहे और किसी में कोई सहानुभूति-संवेदना नहीं जागी।

आजादी के आन्दोलन और ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध कड़ी आवाज उठाने वाले ये कबीले आजादी के लिये सबसे अधिक संघर्ष करने वाले रहे हैं। लेकिन यह भी सच है कि आजादी के बाद मिली स्वतंत्रता और संविधान की कमजोरी का सर्वाधिक शिकार भी इसी समुदाय के लोग हुए हैं। आजाद भारत में यायावर कबीलों को इस आजादी, संविधान और विकास की प्रक्रिया ने आज इन्हें किनारे पर ला खड़ा किया है। राष्ट्रपिता बापू के सपनों को चूरचूर कर सत्ता पाने वाले लोगों ने आजादी के पश्चात गुलामी और अत्याचार के शिकार इन्हीं समुदायों का सर्वाधिक शोषण एवं उत्पीड़न किया।

आजादी के बाद हुए विकास और संविधान से सबसे अधिक दूरी इन्हीं कबीलों की रही है, जिनके समर्पण और मर मिटने की भावना के चलते संविधान और विकास को हम सबने पाया है।

आज यायावर कबीलों के रूप में अकेले राजस्थान में कोई 4 लाख कबीलों की 55 जातियों/समुदायों के जन्म से बिखरे हुए लोग भारतीय होने के बावजूद नागरिक अधिकारों से वंचित रहकर देश की नागरिकता के लिए तरस रहे हैं। इनके जीवन निर्वाह करने की कहानी कम अमानवीय नहीं है।

समाज ने कभी नहीं सोचा किन्तु आज अरावली में कई हजार कबीलेवासी इस मानवीय पहल पर विचार कर रहे हैं, आगे बढ़ रहे हैं और पूरी बुलन्दी के साथ अरावली की घाटी में आवाज लगा रहे हैं। कह रहे हैं 'यह आजादी झूठी है - यह आजादी धोखा है। आज अरावली में बसे राज्य के अलवर, जयपुर, दौसा जिलों के ग्रामीण अंचलों में लगभग 50 हजार बीघा जमीन पर घुमन्तू समुदायों ने घुमन्तू जीवन से मुक्ति पाकर अपनी बस्तियां बनाई हैं।' उनका नारा है - *'जो जमीन सरकारी है, वो जमीन हमारी है।'*

इन कबीलाई लोगों के पास जीवन की कोई भी मूलभूत सुविधा उपलब्ध नहीं है। पीने के पानी के सवाल पर प्रतिदिन उत्पीड़न की घटनाएँ घट रही हैं। यहाँ इनके पास मताधिकार, राशनकार्ड, आवास का अधिकार, बच्चों की शिक्षा, सुरक्षा और पीने के पानी तक का पूर्णरूपेण अभाव बना हुआ है। इन सबका 'मुक्तिधारा' के साथ मिलकर मानवाधिकारों के लिए संघर्ष जारी है।

इन सामाजिक बस्तियों का भी एक नेटवर्क बना है

अरावली में घुमन्तू लोगों के स्थायी रिहाइशी बस्ती में 'मुक्तिधारा' के सचिव रतन कात्यायनी

परिसर में बैठती है ताकि संविधान की पहुँच इस समाज के हाशिये के लोगों तक सहज बनायी जा सके।

'मुक्तिधारा' के बैनर तले मानवाधिकारों के संरक्षण के सवाल को इन कबीलों के वासियों ने गत 10 वर्षों की यात्रा में महामहिम राष्ट्रपति श्री के. आर. नारायणन, प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी सहित देश के सांसदों, राज्य के पूर्व राज्यपाल श्री बलीरामभगत, पक्ष और प्रतिपक्ष के मुख्यमंत्रियों, मंत्रियों, कार्यपालिका के वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारियों और

जिसका नाम 'घुमन्तू विकास पंचायत' है। यह लोकसंगठन गैर-रजिस्टर्ड है। इसी के बैनर तले प्रत्येक माह मुक्तिधारा परिसर में इन रुके-बसे समुदायवासियों का मासिक मेला आयोजित होता है। इस मासिक मेले की सहभागी पंचायत में ही बस्ती, सरकार और समाज को कैसे अनुकूल सापेक्ष सहयोगी के रूप में खड़ा किया जाए, इस प्रश्न पर बंजारों, बावरियों, भोपें, सपेरों, गाड़िया लुहारों और नट कबीलों के सैकड़ों बुजुर्ग मुखिया मिल-बैठकर विचार-विमर्श करते हैं। 10 दिसम्बर को प्रतिवर्ष इनकी महापंचायत 'मुक्तिधारा'

न्यायपालिका की विविध पीठों में समय-समय पर उठाया है।

सत्य और अहिंसा को आधार बनाकर पिछले एक दशक के दौरान राष्ट्र और प्रदेश में इन सब कबीलों ने राष्ट्रपिता बापू और लोकनायक श्री जयप्रकाश नारायण के सपनों को साकार करने का यहाँ प्रयास किया है। उसी का परिणाम है कि आज अरावली में कोई 25 हजार वंचितों के चेहरों पर आत्मविश्वास की झलक प्रत्यक्ष देखी जा सकती है। अरावली जाग उठी है! □

राष्ट्रपति की चेतावनी

आदिवासी हितों को ध्यान में रखना होगा

(गणतंत्र दिवस 2001 के अवसर पर राष्ट्रपति के० आर० नारायणन का राष्ट्र के नाम संदेश)

...भारत में महिलाओं और युवावर्ग में जागरूकता एक ऐसी बात है जिससे कुछ उम्मीद बँधती है। परन्तु हमारी विकास यात्रा का समाज के विभिन्न वर्गों पर असर अलग-अलग पड़ रहा है। उससे देश में पहले से चली आ रही गैर-बराबरी के बढ़ने और नई तरह की गैर बराबरी पैदा होने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। इस प्रक्रिया में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों ने, जो हमारी व्यवस्था में पहले से ही हाशिये पर हैं, सबसे ज्यादा तकलीफें झेली हैं। आदिवासियों का उल्लेख करते हुए डॉ० अम्बेडकर ने कहा था: 'आदिवासियों को 'सभ्यता' में लाने का मतलब है उनको पूरी तरह अपनों जैसा अपनाना, उनके बीच में रहना और उनके साथ साहचर्य की भावना विकसित करना, अथवा संक्षेप में उनको प्यार करना।' परन्तु विकास का जो रास्ता आज हमने अपनाया है उससे उनको भारी आघात पहुँचा है और उनका अस्तित्व ही खतरे में पड़ता जा रहा है। यह सभी लोग अच्छी तरह जानते हैं कि बड़ी नदी घाटी परियोजनाएँ किस तरह आदिवासियों को अपनी जगह से उखाड़ रही हैं और उन्हें अकथनीय कठिनाइयाँ पहुँचा रही हैं। वनों के इलाकों में होने वाले उत्खनन कार्य से अनेक जनजातियों की आजीविका और उनका जिन्दा रहना भी खतरे में पड़ता जा रहा है। विकास की राह में इस दुविधा वाली स्थिति का समाधान विकास के लिए उदार नीतियों से ही मुमकिन हो सकता है। हमारे विस्तृत आदिवासी इलाकों की विकास परियोजनाओं की सही सफलता के लिए एक पूर्व-शर्त यह है कि हम पहले से आदिवासियों और उनके प्रतिनिधियों को विश्वास में लें, उनको परियोजना से होने वाले लाभ बतायें और उनकी आजीविका तथा उनकी संस्कृतियों के संरक्षण के बारे में उनसे सलाह लें। जब उन्हें विस्थापित करना ही पड़े तो पुनर्वास की परियोजनाओं पर उनसे चर्चा हो और उनका ईमानदारी से क्रियान्वयन किया जाय। ऐसा करने से कई गंभीर स्थितियों को टाला जा सकता है और हम आदिवासियों को अपने साथ लेकर चल सकते हैं। हमारे कई कानून बड़े ही प्रगतिशील हैं। उनके तहत आदिवासियों की जमीन का गैर-आदिवासियों, निजी संस्थाओं और निगमों को हस्तांतरण वर्जित है। उच्चतम न्यायालय ने अपने फैसलों में ऐसे प्रावधानों को वैध माना है। हमारे संविधान में प्रतिष्ठित सामाजिक प्रतिबद्धता को हम नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं। पूर्वी भारत में बॉक्साइट और लौह अयस्क जैसे खनिजों के उत्खनन से वनों का और पानी के स्रोतों का विनाश हो रहा है। जहाँ एक ओर इन खनिज संसाधनों के दोहन का लाभ देश को मिलना चाहिए, वहीं दूसरी ओर हमें पर्यावरण के संरक्षण और आदिवासी हितों के सवालों को भी ध्यान में रखना होगा। **ऐसा न हो कि आने वाली पीढ़ियाँ यह कहें कि भारतीय गणतंत्र का निर्माण हरित धरती और उन मासूम आदिवासियों के विनाश की नींव पर हुआ था जो वहाँ सदियों से निवास कर रहे थे। एक महान समाजवादी नेता ने एक बार कहा था कि दुनिया को बदलने की जल्दबाजी में कोई महान व्यक्ति किसी बच्चे को टक्कर मार कर गिरा देता है, तो वह भी अपराध करता है। भारत के बारे में भी यह कहने की नौबत न आये कि अपने विकास की हड़बड़ी में इस महान गणतंत्र ने हरित धरती माता को नष्ट-भ्रष्ट किया और अपने आदिवासी समाजों को उजाड़ा है।** हम दुनिया को दिखा सकते हैं कि सहिष्णुता और संवेदना के धनी इस देश में सभी के लिए रहने के लिए बहुत जगह है।..."

(मूल अंग्रेजी से डॉ० ब्रह्मदेव शर्मा द्वारा अनूदित)

आदिवासी संसाधनों पर मालिकी का सवाल

□ डॉ० ब्रह्मदेव शर्मा

राष्ट्रपति ने 2001 के गणतंत्र दिवस के अवसर पर राष्ट्र के नाम संदेश में चेतावनी दी थी कि 'कही ऐसा न हो कि आने वाली पीढ़ियाँ यह कहें कि भारतीय गणतंत्र का निर्माण हरित धरती और मासूम आदिवासियों के विनाश की नींव पर हुआ था जो वहाँ सदियों से निवास करते आ रहे थे।'

राष्ट्रपति की यह चिन्ता स्वयं राज्य के द्वारा आदिवासी हितों को अनदेखा करके, विकास के नाम पर आदिवासी इलाकों के नैसर्गिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन के संदर्भ में प्रकट की गयी थी। इस मामले में सबसे खेदजनक पहलू तो यही है कि आदिवासियों के संरक्षण की संविधानिक जिम्मेदारी स्वयं राज्य के ऊपर है और वही उसके विरोध में खड़ा है।

आशा की एक किरन

संसाधनों के मामले में वैसे तो स्थिति सदा से ही स्पष्ट रही है। उस पर समाज का नैसर्गिक अधिकार है। आदिवासी इलाकों में लोगों और राज्य के बीच टकराव और विद्रोह तक इसी अधिकार के मामले में उसको नकारने की जनविरोधी नीतियों को लेकर होते रहे हैं। इस मामले में हमारे संविधान और खास तौर से पाँचवीं अनुसूची के प्रावधानों की मंशा का उल्लंघन होता रहा है। इस टकराव को समाप्त करने के लिए ही पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम 1996 की धारा 4 (घ) में ग्राम सभा के रूप में गाँव समाज की अपने परिवेश के संसाधनों के प्रबन्ध की सक्षमता को साफ-साफ दर्ज किया गया है। इस पर भी मैदानी हालत में खास तौर से खनिजों के पट्टे देने के बारे में बदलाव नहीं आया।

सन् 1997 में उच्चतम न्यायालय ने 'समता' के मामले में अपने फैसले में जमीन पर अधिकार को आदिवासी अस्मिता के लिये निर्णायक माना। न्यायालय ने भी साफ-साफ कह दिया कि राज्य सरकारें सरकारी जमीनों का भी पट्टा किसी गैर आदिवासी व्यक्ति या संस्था को नहीं दे सकती हैं।

फिर से उलटी चाल

इस संवैधानिक व्यवस्था का ईमानदारी से पालन करने और उच्चतम न्यायालय के निर्देशों के अनुसार कार्य-योजना बनाने के लिये किसी भी स्तर से कोई पहल नहीं हुई। उसकी बजाय केंद्र सरकार न्यायालय से ही अपने फैसले को बदलने की गुहार करती रही। 6 मार्च 2000 को उसकी याचिका अंतिम रूप से खारिज हो गई।

इस तरह फैसला बदलने में सफलता न मिलने पर सरकार ने अपने अटार्नी-जनरल से राय मांगी। अटार्नी-जनरल ने स्वीकार किया कि उच्चतम न्यायालय का फैसला देश का कानून है। चूँकि न्यायालय ने उसे बदलने से इन्कार कर दिया है इसलिए उसके बारे में फिर से याचिका दायर नहीं की जा सकती है। इस परिस्थिति में दो ही रास्ते बचे रहते हैं। या तो किसी दूसरे प्रकरण में मौका मिलने पर उस मामले को फिर से उठाया जाय या फिर पाँचवीं अनुसूची में संशोधन करके उस फैसले का कानूनी आधार ही खत्म कर दिया जाय। उनके अनुसार पाँचवीं अनुसूची की व्यवस्था संविधान की मूलभूत संरचना का हिस्सा नहीं है। इसलिए उसमें नेमी तौर से संशोधन किया जा सकता है।

महाधिवक्ता की राय मिलने पर उसके अनुसार पाँचवीं अनुसूची में संशोधन पर केंद्रीय सरकार में ताबड़-तोड़ विचार-विमर्श शुरू हो गया। इसमें सबसे गंभीर और आपत्तिजनक बात तो यही है कि हमारी केंद्रीय सरकार ने यह कैसे मान लिया कि पाँचवीं अनुसूची संविधान की मूलभूत संरचना का हिस्सा नहीं है? वैसे तो समाजों की अस्मिता, दायित्व और मानवीय मूल्यों को कानूनी तराजू पर तौलना हास्यास्पद है। परन्तु पाँचवीं अनुसूची का पैरा 5 (1) 'इस संविधान में किसी बात के होते हुए' पद से आरंभ होता है। इसी कारण कई विद्वानों ने पाँचवीं अनुसूची को संविधान के अंदर संविधान का दर्जा दिया है। जमीन पर अधिकार आदिवासी समाज की अस्मिता, उसके स्वाभिमान और सांस्कृतिक बोध की निशानी है। इन तत्वों को अगर कोई संविधान की मूल संरचना नहीं

मान कर उनको झुठलाता है तो उसकी भर्त्सना के लिए कोई भी शब्द नाकाफी है।

विरोध आदिवासी इलाकों से

उधर इस प्रस्ताव की आहट मिलते ही पूरे आदिवासी इलाकों में विरोध होने लगा। उसे देखते हुए स्वयं प्रधान मंत्री ने राज्य सभा में पाँचवीं अनुसूची में संशोधन न करने की घोषणा की। परन्तु उनकी सरकार ने संवैधानिक व्यवस्था और न्यायालय के निर्देशों के अनुसार कोई भी कार्रवाई नहीं की। वे सब उस मौके की टोह में बैठे रहे जिसमें उच्चतम न्यायालय से उसके फैसले पर पुनर्विचार करने के लिए कहा जा सके।

बाल्को: समाज के अधिकार की अनदेखी

छत्तीसगढ़ के अनुसूचित क्षेत्र में कोरबा जिले में बाल्को नाम का सरकारी एल्यूमिनियम उपक्रम था। सरकार ने दस हजार करोड़ रुपये के मूल्य का यह उपक्रम सिर्फ पाँच सौ करोड़ रुपये में एक विदेशी कंपनी स्टर्लाईट को बेच दिया। इसका मामला उच्चतम न्यायालय में गया। पहले तो मजदूर संगठनों ने विरोध किया। छत्तीसगढ़ सरकार ने उसे छत्तीसगढ़ की अस्मिता से खिलवाड़ बताया। 67 दिन तक हड़ताल चली परन्तु अंत में मजदूरों की सेवा शर्तों को मान्यता देने के आधार पर नये मालिकों से समझौता हो गया।

त्रासदी यह है कि इस मामले में जिन आदिवासियों को बाल्को के कारण बेघर होना पड़ा था, जो उसके प्रभाव से आज भी उजड़ रहे हैं, वे पक्षकार ही नहीं है। कारखाना चलेगा, उसके कामगारों को उचित वेतन मिलता रहेगा, उद्योगपतियों को लाभ होता रहेगा। मगर उजड़ते आदिवासियों की सुध किसी ने नहीं ली। उनके हितों का सवाल न छत्तीसगढ़ सरकार ने उठाया और न मजदूर संगठनों ने ही।

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि शहरी इलाकों के बारे में 'भूरिया समिति' ने 1995 में ही साफ कहा था कि अनुसूचित क्षेत्रों में स्थापित सभी बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठानों में 'स्थानीय समाज द्वारा संसाधनों के उपयोग की अनुमति देने के उपलक्ष्य में 50 प्रतिशत शेयर दिये जाएँ और उसे मालिक माना जाए। इन प्रतिष्ठानों में निवेशकर्ता कम्पनी या व्यक्तियों के शेयर 26 प्रतिशत तक सीमित रखे जाएँ।' केंद्र सरकार ने रिपोर्ट सौंपने के 7 साल के बाद भी 'भूरिया समिति' की सिफारिशों पर अमल नहीं किया है। संविधान की व्यवस्था अनुसूचित क्षेत्रों पर लागू नहीं होने से वहाँ का पूरा कामकाज बिना किसी कानूनी आधार के चल रहा है। कोरबा का शहरी क्षेत्र उसमें शामिल है।

पाँचवीं अनुसूची का संशोधन संभव नहीं

ऊपर के घटनाक्रम से साफ है कि केंद्र और राज्यों की सभी सरकारों में अनुसूचित क्षेत्रों में संसाधनों पर आदिवासी समाज के नैसर्गिक अधिकार की परवाह नहीं है। वे उस बारे में अगर हो सके तो संविधान, खास तौर से पाँचवीं अनुसूची में भी संशोधन करने के लिये तैयार हैं। लोगों के खुले विरोध के कारण वे फिलहाल रणनीति के रूप में उस रास्ते नहीं जायेंगी। परन्तु उच्चतम न्यायालय के माध्यम से वे 'समता' के मामले में उसके पहले के निर्णय को निरस्त कराने का पूरा प्रयास करेंगी।

इस पूरी कार्रवाई में इस बात को भुला दिया गया है कि अनुसूचित क्षेत्रों में प्राकृतिक संसाधनों पर समाज का नैसर्गिक अधिकार है। इसी बात को विस्तार अधिनियम में ग्राम सभा की 'सक्षमता' की बात दर्ज करके साफ किया गया है। उच्चतम न्यायालय ने भी अपने फैसले में विस्तार से अधिनियम के क्रांतिकारी प्रावधानों की ओर इशारा किया है। यही नैसर्गिक अधिकार आदिवासियों के मामले में अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों में भी दर्ज हैं जिन पर भारत ने हस्ताक्षर किये हैं। ऐसे में संसाधनों पर समाज का अधिकार संविधान, किसी कानून या न्यायालय के किसी फैसले का मुहताज नहीं है। वह तो समाज का नैसर्गिक अधिकार पहले था, आज भी है और आगे भी बना रहेगा। परन्तु महामहिम राष्ट्रपति की बेवाक चेतावनी पर हमारे देश में किसी स्तर पर भी गंभीर चर्चा की बात तो दूर, कहीं पर जिक्र तक नहीं होने से यह साफ है कि हमारे शासक वर्ग और भद्र समाज को आज की हालत में आदिवासियों के भविष्य या उनके खातमें तक के बारे में कोई चिन्ता नहीं है। आदिवासियों के विनाश पर भी अगर राष्ट्र के निर्माण का रास्ता खुलता है, तो वह भी उन सब को स्वीकार है।

समाज की अस्मिता दाँव पर

इस तरह आजादी की आधी सदी के बाद संसाधनों पर समाज के नैसर्गिक अधिकार का सवाल दो टूक रूप में फैसले के लिये समाज के सामने हैं। वह अधिकार संविधान में स्थापित होने के बावजूद अब तक अनदेखा किया जाता रहा है। इसी कारण आज तक हमारे देश में लगभग एक करोड़ आदिवासी विस्थापित हो चुके हैं। इनके विनाश के प्रति सरकारों की असंवेदनशीलता को देखते हुए ही राष्ट्रपति को चेतावनी देनी पड़ी। परन्तु इस पर भी सरकारों के रुख में किसी तरह का बदलाव नहीं आया है। माननीय उच्चतम न्यायालय के आदेश के चलते जो थोड़ा सा रोड़ा आ गया था उसके हटते ही आदिवासियों के संसाधनों की निरीह लूट होना निश्चित है।

देश के आदिवासी समाज को यह स्थिति स्वीकार नहीं है। नैसर्गिक संसाधनों के उपयोग से विकास हो परन्तु समाज से सलाह के बिना आदिवासी क्षेत्र में किसी को पैर रखने की इजाजत नहीं होगी। उस इलाके में घुसने के लिए भी अनुमति तभी मिले जब सभी यह मानें कि औद्योगिक प्रतिष्ठान की मालिकी समाज की होगी।

[डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा (जन्म-1931) लम्बे समय तक भारतीय प्रशासनिक सेवा में रहने के साथ-साथ उत्तरपूर्व पर्वतीय विश्वविद्यालय के कुलपति और अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के आयुक्त के रूप में सर्वोच्च संविधानिक पद पर रहे हैं। व्यवस्था से समझौता न कर सकने के कारण उन्होंने समय के पूर्व सेवा से त्याग-पत्र दे दिया। वर्तमान में वे 'भारत जन आंदोलन' के अध्यक्ष के रूप में व्यवस्था में बुनियादी बदलाव के लिए संघर्ष में लोगों के साथ जुड़े हैं। आदिवासी इलाकों में स्वशासी व्यवस्था का सूत्रपात इसी संघर्ष का नतीजा है।]

दोहे

□ शिव कुमार 'पराग'

इसी देश में सड़ रहा, गोदामों में अन्न।
इसी देश में मर रहे, भूखे पेट विपन्न॥

दावा था ले आएंगे, सबके लिए सुराज।
आया तो सब देखकर, सन्न खड़े हैं आज॥

यह गाँवों का देश है, इसका बजट अजीब।
छाए हैं उद्योगपति, बिखरे हुए गरीब॥

जब तक हैं हम नींद में, तब तक है अन्धेर।
आँख खुली, जगरम हुआ, फिर काहे का फेर॥

महँगी पुस्तक-कापियाँ, बढ़ता शिक्षण-शुल्क।
पूछो किसी गरीब से, कहाँ जा रहा मुल्क॥

भारत को आजाद हुए 55वां साल चल रहा है और इन्हें यानी डी.एन.टी. यानि विमुक्त जाति को 50वां साल। जवाहरलाल जी ने 1952 की 30 अगस्त को शोलापुर की घेरेबन्द दमनकारी बस्ती के तार काटकर लाखों डी.एन.टी. को बस्ती में से तो आजाद करवा दिया लेकिन भारत के कानून और अन्य समाजों के पूर्वग्रहों से आजाद न करवा पाए। शोलापुर के तार को काटकर उन्होंने उन लाखों-करोड़ों लोंगों को जो न जाने कितने सालों से घेरबन्द दमनकारी बस्ती में जहन्नुम से भी बदतर जिन्दगी जी रहे थे, को विमुक्त तो किया, लेकिन क्या है वो विशेष मुक्ति ? क्या प्रधानमंत्री जी की विमुक्ति की घोषणा करने से लाखों-करोड़ों खानाबदोशों को विशेष मुक्ति मिल गई ? हाँ, विशेष मुक्ति मिली। लेकिन सिर्फ सरकारी कागजों पर। आज स्वर्गीय जवाहरलाल जी होते तो देखते कि जिन्हें उन्होंने विशेष मुक्ति दी थी, उन करोड़ों लोगों की इस तथाकथित लोकशाही देश में कैसी विशेष दुर्दशा हो रही है।

खैर, आज हम यहाँ अपनी जाति के कुछ बुजुर्गों से, उनकी ही जुबानी उनकी वो करुण गाथा सुनाते हैं जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

इतिहास : जो कहता है अपनी कहानी

☐ प्रांची श्यामजी

(दक्षिण बजरंगे को सुनाई गयी कहानी)

हमारी 77 साल की प्रांची दादी कहती हैं कि "मैं मंजूराव कडीये की बेटी थी। वो जमाना अंग्रेजों का था। मेरा बाप अपनी और हमारी पेट की कभी न बुझने वाली आग को बुझाने के लिए चोरी करता था, जैसे कि रात को रास्ते पे सोये हुए लोगों के कम्बल छीन कर भाग जाना, उनके चप्पल उठा लेना, गुदड़ी ले जाना, उनकी बकरियां चुरा लेना...।

उस वक्त मेरी उम्र करीब आठ-दस साल की रही होगी। मैं भी अपने माँ-बाप के साथ घर-घर खाना माँगने जाती थी। बहुत ज्यादा भूख लगने पर किसी की भी खाने की थाली लेकर भाग जाती थी। कभी भीख माँगने निकलते थे तो गला फाड़-फाड़ के गीत गाने पड़ते थे। जैसे कि—

सास मोरी खावे,

प्रांची श्यामजी बाई छारानगर (अहमदाबाद) की अपनी बस्ती में लोगों के साथ

ननद मोरी खावे,

सोने का डंडा, खींच के सैंया मारे रे...

ट्रेन में मैं, मेरी माँ और मेरा बाप हम लोग अपने पेट पर जोरों से हाथों को मार-मारकर भीख माँगते थे। उस छोटी उम्र में भी मैं बहुत खूबसूरत दिखती थी। मेरा गाना सुनकर

लोग झूम उठते थे और लोगों के खुश हो जाने से हमारा पेट भर जाता था।

बहुत संघर्ष था उस वक्त जिन्दगी में। दरबदर भटकते हुए जिन्दगी के पल बीते जा रहे थे। पकड़े जाने पर ब्रिटिश गवरमेंट का जब डंडा पड़ता था तो शरीर से चमड़ी उधड़ जाती थी। मुँह से जब हमारी दर्दनाक आह निकलती थी तो लगता था जैसे भगवान ने शायद हमारा जन्म इसी तरह का जीवन जीने के लिए ही दिया है। सिर्फ मैं ही नहीं, नन्दुरवार के सारे कंजरों की यही हालत थी। सवर्ण तो हमें नजर भर देखते भी नहीं थे और कानून हमेशा साये की तरह हमारा पीछा करता था। हम सभी कभी जंगलों में सर्द शामें गुजारते तो कभी किसी ऐसी गंदी जगह छुप जाते जहाँ कोई आ न सके। बचपन की वो डरावनी रातें, रात के सन्नाटे में पुलिस के बूट की आवाज, सवर्णों की गालियाँ आज भी जैसे सीने के किसी कोने में अब तक बंद हैं।

एक दिन एक बकरी की चोरी करते वक्त मेरे पिताजी पकड़े गए और पिताजी के साथ मुझे, मेरी माँ को, सभी को घेरेबन्द दमनकारी बस्ती की नुकीली तारों के बीच बंद कर दिया गया।

धुलिया (धुले) जिले की वो नुकीली तारों वाली बस्ती लगता था जैसे भगवान ने अगर पृथ्वी पर कहीं नर्क बनाया है तो वो यहाँ है। धुलिया की जहन्नुमनुमा उस बस्ती में हजारों की तादात में बच्चे, बूढ़े, लड़के-लड़कियां सरकार की नजर-कैद में थे। चारों ओर छोटी-छोटी कच्ची झोपड़ियां थीं, जिनमें इंसान जानवर की जिंदगी जीते थे - पालतू जानवर। अगर कोई भूल करता है या कुछ सीख नहीं पाता तो जिस तरह उसके मालिक का डंडा उस पर बेरहमी से पड़ता वैसे ही ब्रिटिश सरकार के आदमी लोगों को नंगा करके सबके बीच चाबुक से मारते थे। कंजरों के सिवा वहाँ चमार जमात के लोग, भंगी-भामटा, डफेर, पारधी जमात के लोग भी बंद थे। बचपन की मासूमियत में बस्ती की वो दुनिया कुछ दिन अच्छी लगी। लेकिन फिर असह्य हो गई। माँ अगर सुबह चार बजे नहीं उठती थी तो उसे डंडे की चोट उठाती थी। हर जगह पुलिस वाले हमारे साथ आते थे। मेरी खूबसूरती को मेरी माँ हमेशा अपने आँचल में छुपा के रखती थी। मैं और मेरी जैसी न जाने कितनी औरतों पर पुलिस की हवस भरी निगाह थी।

हम खानाबदोश को जो घूम-घूमकर अपना जीवन व्यतीत करना चाहते थे, जिनको सिर्फ घूमना ही पसंद था, जो कभी किसी एक जगह रहना पसंद नहीं करते थे और आजाद पंछी की तरह कुदरत के हरेक रूप का लुत्फ उठाना चाहते थे, उन्हें उन नुकीले तारों के बीच बंद कर दिया गया।

मुझे अब भी याद है मार खाने के बाद मेरे बाप की वो सिसकने की आवाजें। हर वक्त ये डर लगता था कि न जाने कब इंसाननुमा भेड़िया आ जाएगा और हमें नोच कर खा जाएगा।

समय बीतता गया। जिन्दगी की सुख-दुख की परछाइयाँ देखती गई। एक दिन अहमदाबाद की घेरेबन्द बस्ती में से कुछ कंजर धुलिया की बस्ती में आए हुए थे। अहमदाबाद बस्ती के सुप्रिटेन्डेन्ट आंकीराव साहब ने श्यामजी बजरंगे नामक आदमी से मेरी शादी करवाई। फिर मुझे शादी करके पुलिस बन्दोबस्त के साथ अहमदाबाद की घेरेबन्द बस्ती में लाया गया। यहाँ भी कुछ ज्यादा फर्क न था। जिस तरह लोग धुलिया में जिन्दगी जी रहे थे वैसे ही यहाँ पर भी लोग नुकीले तारों के बीच बन्द पड़े थे। मेरे पति कल्याण मिल में नौकरी करने जाते थे। वहाँ भी उनके पीछे पुलिस जाती थी। सुबह जाना और शाम को वापस आना। मेरे पिताजी और मेरी माँ ने भी अपनी बदली अहमदाबाद की घेरेबन्द बस्ती में करवा ली थी। पूरा दिन मजूरी करने के बाद एक आना, आधा आना मिल पाता था जिससे गुजारा होना संभव न था। इसलिए हमारे मर्द लोग पुलिस को रिश्वत देकर, तार काटकर रातों को चोरी करने जाते थे। वे लोग जानवरों को पकड़कर

सवर्ण तो हमें नजर भर देखते भी नहीं थे और कानून हमेशा साये की तरह हमारा पीछा करता था। हम सभी कभी जंगलों में सर्द शामें गुजारते तो कभी किसी ऐसी गंदी जगह छुप जाते जहाँ कोई आ न सके। बचपन की वो डरावनी रातें, रात के सन्नाटे में पुलिस के बूट की आवाज, सवर्णों की गालियाँ आज भी जैसे सीने के किसी कोने में अब तक बंद हैं

उन्हें काट-काटकर लकड़ियों के गट्ठर के बीच जानवर का मांस रखकर चुपके-चुपके रातों को ही वापस आ जाते थे। फिर वो मांस कई दिनों तक थोड़ा-थोड़ा आग पर सेंक कर हम खाते थे। पकड़े जाने पर मर्दों को बहुत मारा जाता था।

एक दिन आंकीराव साहब ने मेरे पिताजी मंजूराव को धरती पर धक्का मार कर गिरा दिया था और उन्होंने हमेशा के लिए उस जिल्लत से भरी जिन्दगी से छुटकारा पा लिया था। मेरे पिताजी के मरने से किसी भी अधिकारी को किसी भी तरह का कोई फर्क नहीं पड़ा था। अगर हमारी गिनती इंसानों में की जाती तो शायद कुछ फर्क पड़ता। लेकिन

बरसों से दिल की तमन्ना थी कि आजादी की हवा में सांस लेंगे, लेकिन सभी आशाएं नकारा साबित हुयी। वही छुपने-छुपाने की जिन्दगी, एक जगह से दूसरी जगह भागने की जिन्दगी, गंदी से गंदी गालियां सुनने की जिन्दगी, समाज के दुत्कार की जिन्दगी, साये की तरह पीछे पड़ी पुलिस के शक की जिन्दगी!

सरकार की नजर में तो हम जानवर ही थे और ऐसे न जाने कितने जानवरों की पूरे हिन्दुस्तान में बलि चढ़ाई जाती होगी। हम औरतों को अगर शौच के लिए भी जाना पड़ता तो पुलिस साये की तरह हमारे साथ रहती थी।

वर्षों से घेरेबन्द बस्ती में रहने के बाद जैसे हम उसके आदी हो गए थे। मार खाने के आदी, गाली सुनने के आदी, स्वतंत्र विचारधारा न रखने के आदी, डरावनी जिन्दगी जीने के आदी, छुपते-छुपाते रहने के आदी, शायद सेटलमेंट में हमें अच्छा आदमी बनाने की कोशिश कराई जा रही थी। लेकिन अच्छा आदमी बनाने का वो रास्ता शायद गलत था। जबरन किसी आदमी को कैद करके शायद उसे अच्छा आदमी नहीं बनाया जा सकता।

इसी तरह हम लोगों की संघर्षमयी जिन्दगी अपना रास्ता खुद ढूढ़ते हुए चली जा रही थी कि अचानक एक मोड़ आया। हमें सेटलमेंट (घेरेबन्द बस्ती) में पता चला कि हमारे देश को आजादी मिल गई है, हमारी भारतमाता की जंजीरें टूट कर जमीन पर बिखर गई हैं।

मुझे याद है सेटलमेंट में जैसे उत्सव सा हो गया था। सभी खुश थे कि अब हम आजाद हो जाएंगे। अब हमें न्याय मिलेगा, पहनने को कपड़े मिलेंगे, पेट भरने के लिए खाना मिलेगा और सिर छुपाने के लिए घर मिलेगा। अब हमारी सरकार आएगी और अब इतने सालों के संघर्षमय जीवन का अन्त आएगा। हम खुली हवा में सांस ले पाएंगे और खून-पसीने की और बलिदानों की आजादी हम जी पाएंगे। सेटलमेंट में ही मुझे तीन लड़कियां और तीन लड़के पैदा हुए थे, लगा अब इनकी जिन्दगी कुछ बना पाएंगे।

आशाएं, बड़ी सारी आशाएं थीं...फिर इन्तजार और इन्तजार...लम्बा इन्तजार...इन्तजार कि कोई तो आएगा और हमें इन नुकीले तारों के बीच में से आजाद करवाएगा। लम्बे इन्तजार ने हम सबको शोक में बदल दिया। फिर वही संघर्षमय जिन्दगी...।

शायद किसी भी राजनेता की नजर आजादी के नशे में उन लाखों-करोड़ों लोगों की ओर नहीं गई जो कभी अपने देश की आजादी के लिए विद्रोह किए थे और आज बेसहारा होकर नज़रबंद पड़े हैं। क्या करें आजादी का नशा ही कुछ ऐसा होता है।

लम्बे कटीले, पथरीले रास्ते के बाद जब मंजिल सामने होती है और फिर भी हम उसे नहीं पा सकते हैं तो इससे ज्यादा पीड़ादायक शायद और कुछ नहीं हो सकता। पहले आशाहीन जीवन था, अब आशा थी। परन्तु सिर्फ आशाओं के सहारे जीवन जीना बहुत ही दुष्कर होता है। मुझे लगा शायद सेटलमेंट के बाहर जो सवर्ण लोग रहते हैं वे आजाद हो गए हैं, हमें आजादी नहीं मिली। नहीं तो इतने सारे राजनेताओं में से कोई तो आता और कहता "जाओ आज से तुम लोग आजाद हो।" आजादी शब्द इतना प्यारा लगता था कि सिर्फ इस शब्द की आशा पर ही न जाने कितने दिन काट दिए।

फिर से वही चोरी-चकारी, जबरन डंडे की मार का जीवन शुरू हो गया। हमें शायद आजाद होने में देर थी। पांच साल के बाद हमारे ही कंजर जमात के एक शिक्षक बोधक नगरकर जो खुद शोलापुर की सेटलमेंट में शिक्षक थे, उन्होंने जवाहरलाल को बुलाया और इस तरह शोलापुर की सेटलमेंट के तार काटकर डी.एन.टी. को जो ब्रिटिश काल से सेटलमेंट

(शेष पृष्ठ 36 पर)

[विगत 10-11 सितम्बर को दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब के सभागार में 'भारत की विमुक्त एवं घुमन्तू जनजातियों की समस्या पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन बड़ोदरा की डीएनटी रैग संस्था द्वारा किया गया। इस संगोष्ठी में 'पश्चिम बंगाल खेरिया सबर कल्याण समिति' तथा धिकारोस जनजाति के जुझारू कार्यकर्त्ताओं ने भी भाग लिया। श्री प्रशान्त रक्षित ने खेरिया सबर जनजाति की तथा श्री शिवदास लोहार ने धिकारोस जनजाति की समस्याओं पर अपने आलेख प्रस्तुत किए। जनजातियों के बीच कार्य कर रहे कार्यकर्ताओं के लिए इन आलेखों की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए इन्हें यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है -**संपादक**]

पश्चिम बंग खेड़िया सबर कल्याण समिति विमुक्त व घुमन्तू (यायावर) जनजाति की कथा

□ **प्रशान्त रक्षित**

गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र, झारखण्ड, उत्तर-प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मध्य-प्रदेश तथा दिल्ली से जनजातियों के लोग तथा संगठनकर्त्ता आए हैं। मैं विगत 16 वर्षों से पश्चिम बंगाल की एक विमुक्त जाति (खेड़िया सबर जनजाति) के काम के साथ गहराई से जुड़ा हुआ हूँ। इसलिए सामान्य अनुभव है। कार्यक्रम में उपस्थित कार्यकर्त्तागण का मैं ऋणि हूँ। देश की विभिन्न जनजातीय लोगों के साथ उठना— बैठना, उनके जीवन दर्शन को जानना, वर्तमान आर्य-सामाजिक व्यवस्था और उस समाज की समस्या के विषय में जानने के बाद एक साधारण समस्या निकलती है—वह समस्या है जमीन की। भारत वर्ष की अधिकांश भूमि इन्हीं मूल लोगों की थी। किन्तु वर्तमान में रहने की जगह और कृषि भूमि का मालिकाना हक इनके हाथों में नहीं है। इसका कारण यह है कि वे लोग हृदय से सरल स्वभाव के थे। अत: कुछ स्वार्थी लोगों ने इन्हें भूमि के मालिकाना हक से वंचित कर दिया। पूरे भारत व संसार के आदिवासी क्षेत्रों में यही दृश्य देखा जाता है।

वन-अरण्य आदिवासियों का हरा-भरा पारम्परिक मित्र था। विकास के नाम पर हजारों-हजार मील जंगलों का उन्मूलन हो गया। फलस्वरूप ये लोग दैनिक जीवन की जो चीजें जंगल से प्राप्त करते थे, अब वे भी लुप्तता के रास्ते पर आ गईं। विकास के पथ पर बढ़ने के क्रम में विमुक्त एवं घुमंतू जनजातियों के लोग दिशाविहीन हो गए हैं तथा काम की खोज में शहरों की ओर आने के लिए मजबूर हैं। लेकिन शहर का परिवेश इन लोगों के हित में न होने के कारण ये लोग रोगों के शिकार हो गए और जिन्दा रहने की उम्मीद में तरह-तरह के अपकर्म में लिप्त होने के लिए बाध्य हो गए। जंगल समाप्त होने से जंगल में पुन: वापस जाकर घर बसाने की चिंता छोड़ दिए। छारा, सांसी पारधी, मीणा आदि के लोग शिक्षा में आगे बढ़कर भी समाज-प्रशासन की सन्देह की नजर से बच नहीं पाए।

छारा युवक वकील, मीडियाकर्मी आदि प्रतिष्ठित पेशों से जुड़कर भी खौफ के वातावरण में जी रहे हैं। वे दु:ख के साथ ऊँची आवाज में यह कह रहे हैं कि शराब बनाना हमारी मजबूरी है। इसके बिना हम लोगों के जीने का कोई दूसरा उपाय नहीं हैं। भारतीय नागरिक होने के बाद भी इस रास्ते पर जाने के लिए हमें पुलिस ने बाध्य किया। ऐसे ही चामटा वर्ग के लोग जिन्दा रहने के लिए पत्थर के खदान में काम करते थे। वह रास्ता अब बन्द हो रहा है क्योंकि खदान का समस्त काम आधुनिक मशीनों से किया जा रहा है। गरीब लोग दो मुट्ठी अन्न के लिए श्रमिक का काम करें लेकिन उस रास्ते में भी अब बाधा खड़ी हो रही है।

यही दशा पश्चिम बंगाल की धिकारोस लोगों की है। ये लोग लोहे के अस्त्र तैयार करते थे, सुदक्ष कारीगर थे।

दिल्ली में आयोजित दो दिवसीय गोष्ठी में (बाएं से दाएँ) दिलीप डि' सूजा, जी एन देवी, महाश्वेता देवी, मीना राधाकृष्ण, रतन कात्यायनी व अन्य

चाहिए।

सामान्य जरूरतें

(क) व्यक्ति केंद्रित—पेयजल, कम्यूनिटी सेन्टर, स्कूल, सड़क, शौचालय, कृषि व्यवस्था, सिंचाई, वाद्ययंत्र, चिकित्सा आदि।

(ख) कार्य के क्षेत्र में-प्रशिक्षण, उत्पादन व्यवस्था।

ये समस्त सर्वेक्षण पूर्ण होने के पश्चात निष्कर्ष तैयार करना जिसके द्वारा एक चित्र स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आएगा। जैसे कि कितनी जनसंख्या (बालक/बालिका, पुरुष/महिला की) है, शिक्षा का प्रतिशत, पेय-जल की व्यवस्था, भूमि की स्थिति, प्रति व्यक्ति रोजगार आदि की स्थिति क्या है। इन विषयों पर संगठन के माध्यम से विकास कार्य सम्पन्न किया जा सकता है।

कारखाना के युग से ये लोग अभी बहुत पीछे हैं। बीर भूमि में ये लोग अपना परिचय नहीं देते हैं ताकि प्रशासन की बुरी नजर न पड़ जाए। लोधा समाज में शिक्षा से सचेतनता का प्रतिशत बढ़ गया है, परन्तु कार्य के क्षेत्र में अभी तक कोई सुविधा नहीं मिली है। महाश्वेता देवी की पहल से पूरे भारत के डीएनटी ने अपने-अपने समाज कल्याण समिति' का गठन किया। पूरे भारत में पश्चिम बंग खेड़िया सबर कल्याण समिति ने एक ऐसा मॉडल बनाया है जिसकी सहायता से अपना काम अपने संगठन द्वारा कैसे किया जाए, इस बारे में कुछ प्रस्ताव आपके समक्ष रख रहा हूँ—

1. निजी सम्पर्क द्वारा आपस में मिलकर एक मजबूत संगठन तैयार करना। जैसे कि (क) ग्राम कमेटी (ख) ब्लाक कमेटी (ग) जिला कमेटी तैयार करना। प्रत्येक कमेटी में महिलाओं का स्थान अवश्य होना चाहिए।

2. परिवार से संबंधित सर्वेक्षण करना (विस्तृत रूप से)—जैसे संख्या, शिक्षा, जमीन-जायदाद, आय, घर-द्वार, सुलभ पेय-जल, बीमार, दूरी-(डाकघर, ब्लाक, जिला मुख्यालय से), गांव में क्या-क्या सुविधा है या नहीं है। इस संबंध में ग्राम कमेटी के अधिकारी को क्या-क्या निर्णय लेना चाहिए।

किसी विषय पर परीक्षण होगा या नहीं, छोटा-छोटा मॉडल बनाकर लोगों को दिखा कर उत्साहित किया जाए। कभी भी जोर-जबरदस्ती से विकास नहीं किया जा सकता है। प्रयोजन अनुसार कल्पना से अपने क्षेत्र में जो भी संसाधन है, उसी को व्यावसायिक रूप से काम में लाया जाए। अपने बल-बूते पर कार्य हो। ऋण का कोई भार नहीं रहे। अति सरल उपाय से सभी का सहयोग लिया जाए।

हम जो भी कार्य करना चाहते हैं उसके लिए पैसों की आवश्यकता होती है। वह पैसा विभिन्न रास्ते से, कहीं से भी लिया जा सकता है। परन्तु सर्वप्रथम यह जरूरी है कि संगठन के नाम का सरकारी तरीके से रजिस्ट्रेशन कराना चाहिए। केंद्रीय सरकार में बहुत सारे दफ्तर स्वयं-सेवी संस्थान के विकास के कार्य में सहायता करते हैं, जैसे कृषि आदिवासी विकास, मानव सम्पदा, विकास मंत्रालय, ग्रामीण

विकास मंत्रालय, कानून विकास कार्यालय आदि। ऐसे ही मंत्रालय व राज्य सरकार के कुछ संगठन भी आर्थिक रूप से सहायता करते हैं। इसके अलावा भारतवर्ष के बहुत सारे व्यवसायिक प्रतिष्ठान मानव कल्याण के लिए ऋण से सहायता प्रदान करते हैं। इसके लिए हम एक छोटा मॉडल बनाकर अपने अच्छे कार्यों से इस प्रकार के कार्यालयों/संगठनों को बेहतर विकास हेतु स्वयं की तरफ आकर्षित कर सकते हैं।

इस पूरे कार्य को सफल करने का मूल बीज यह है सत्यता, समर्पण के भाव की मानसिकता और इसके साथ-साथ—(क) दृढ़ता, पारदर्शिता, लोकतांत्रिक तरीके से सोचने का ढंग और नियमों का पालन करना,

(ख) धैर्य, अपने लक्ष्य से विचलित नहीं होना और

(ग) राजनीति से दूर रहना है।

मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि इस प्रकार से संगठन तथा व्यक्ति की जीत को कोई रोक नहीं सकता।

□

पश्चिम बंग धिकारोस कल्याण समिति

□ शिवदास लोहार

श्रद्धेय उपस्थित सज्जनों एवं मेरे दोस्तो!

आज की संगोष्ठी में दो-चार बातें बोलने के लिए आया हूँ। पश्चिम बंगाल के एक पिछड़े इलाके से मैं लोहार या धिकारोस (ठीकारो) जाति के प्रतिनिधि के रूप में आपके सामने प्रस्तुत हुआ हूँ। पहले हमारी जाति का थोड़ा सा परिचय नहीं देने से आपको समझना संभव नहीं होगा।

गुलाम हिन्दुस्तान में हम लोग लोहा गलाने तथा लोहे का सामान बनाने का काम करते थे और उसी से हमारी रोजी-रोटी चलती थी। गुलाम भारत के स्वदेशी आन्दोलन के नायकों के लिए भी हम लोग हथियार बनाकर दिया करते थे। ब्रिटिश सरकार को इसका पता चलते ही उन्होंने हम पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इसके कारण हमारे उद्योग पर चोट पहुंची। ब्रिटिश सरकार ने हमारे जनजीवन पर भी बहुत अत्याचार शुरू किया। जान बचाने के लिए हमारे पूर्वज घर-द्वार छोड़कर जंगलों में रहने लगे।

हमारे घर के दरवाजे तोड़ दिए गए और हमें विद्रोही-अपराधी करार दिया गया। किसी भी शक के आधार पर पकड़ कर हमलोगों के ऊपर निर्मम अत्याचार किया जाता था। साथ ही साथ हमें जन्मजात-अपराधी जनजाति या क्रिमिनल ट्राइब घोषित किया गया। वन-जंगल में हमारे पूर्वजों को भूख के कारण चोरी और लूटपाट भी करनी पड़ जाती थी। करीब 200 वर्ष के ब्रिटिश शासन के कारण हमारे उद्योग-धंधे समाप्त हो गए। हमें निखट्टू, घृणित और असामाजिक कहा जाने लगा। हमारे पड़ोसी दूसरे जाति के लोगों ने भी इसका कोई प्रतिवाद नहीं किया। हमारे भारतीय कवि के दोहों में भारत एक ऐसा देश है जहां विविध भाषा, पहनावा रहते हुए भी महान मिलन हुआ अर्थात एकता स्थापित हुई। लेकिन हमारे समाज के साथ उल्टा हुआ।

देश आजाद हुआ। हम सोचते थे कि हमारा दु:ख अब दूर होंगे। आजादी के पचास वर्ष हो गए, फिर भी हम हिन्दुस्तान में उपेक्षित ही पड़े रह गए। हम कौन सी जाति (अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ी जाति) में हैं, यह आज भी हमें पता नहीं है।

इसलिए दोस्तों! हम आन्दोलन शुरू किए। हमारी मां देशी बांग्ला भाषा की प्रसिद्ध लेखिका और डीएनटी—रैग की अध्यक्ष महाश्वेता देवी के नेतृत्व में हम लोगों ने 'धिकारोस समाज कल्याण समिति' का गठन किया। शिक्षण का कार्य गायत्री चक्रवर्ती स्पीवाक के आर्थिक मदद से चार गांवों के केंद्रों में चल रहा है। बाकी छह गांव में शिक्षा-केंद्र और साथ-साथ खिचड़ी बाँटने का काम जल्दी ही शुरू होने वाला है।

सन् 1995 में सरकारी तौर पर हमारी जाति की दो बार गिनती हुई। लेकिन दु:ख की बात है कि उस जनगणना का कोई निष्कर्ष अभी तक नहीं निकला कि हम किस जाति, वर्ग या सम्प्रदाय में रखें जाएंगे। वह रिपोर्ट भी नहीं मिली। हमारा अनुरोध है कि जल्द से जल्द हमारी जाति को किसी एक सूची में रखा जाए।

□

दस्तावेज

दिनांक 31.7.2000

सेवा में,
न्यायमूर्ति एम०एन० वेंकटचलैया, अध्यक्ष,
संविधान के कार्यान्वयन की समीक्षा हेतु राष्ट्रीय आयोग,
कमरा नं० 283, पहला माला, विज्ञान भवन विस्तार,
मौलाना आजाद रोड, नई दिल्ली-110001

विषय : भारत के संविधान कार्यान्वयन की आपकी समीक्षा में धारा 341 व 342 में उपयुक्त संशोधनों के साथ भारत की खानाबदोश व गैर विज्ञापित जनजातियों हेतु तीसरी अनुसूची के निर्माण की सिफारिश करने की प्रार्थना।

आदरणीय महानुभाव,

हम, भारत की लगभग 200 भाग्यहीन, विमुक्त एवं खानाबदोश व अघोषित (गैर विज्ञापित) जनजातियाँ आपके आयोग के सामने अपनी अपील पेश करते हुए आपसे प्रार्थना करते हैं कि संविधान में दी गई अनुसूचित जातियों व जनजातियों को प्रदान किये गये सभी शैक्षणिक, रोजगार संबंधी तथा राजनीतिक अधिकारों व विशेषाधिकारों के समान ही हमें भी प्रदान करने हेतु धारा 341 व 342 में उपयुक्त संशोधनों के साथ भारत की खानाबदोश व गैर विज्ञापित जनजातियों हेतु तीसरी अनुसूची के निर्माण की सिफारिश की जाए।

संलग्नक : 1

संलग्न है चेन्नई के अखबार 'द हिन्दू' द्वारा फोलियों के रूप में प्रकाशित एक प्रति जिसमें कि विभिन्न अधिकारियों तथा शोध विद्वानों के लेख, रचनायें व अध्ययन प्रकाशित किये गये हैं जिनमें कि भारत की पूर्व-अपराधिक जनजातियों/गैर विज्ञापित जनजातियों (डी०एन०टी०) की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, सामाजिक-मानवविज्ञानी अध्ययन, आर्थिक व शैक्षिणिक स्तर व भारत की गैर विज्ञापित जन-जातियों के साथ उन्हें अंग्रेजों व स्वातंत्र्योत्तर भारत के शासकों द्वारा भी पैदा इसी व आदतन अपराधी करार देकर किये जा रहे अमानवीय व्यवहार का वर्णन किया गया है।

संलग्नक : 2

दूसरा दस्तावेज जो कि हम संलग्न कर रहे हैं वह है राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (रा०मा०आ०-एन०एच०आर०सी०) को अघोषित समुदायों के मानव अधिकारों पर गठित एक परामर्शदाता दल द्वारा दाखिल की गई एक रिपोर्ट। 1998 में जस्टिस एम०एन० वेंकटचलैया, एन०एच०आर०सी० के अध्यक्ष थे। इसलिए हम कहते हैं कि जस्टिस वेंकटचलैया को इस बात का प्रत्यक्ष ज्ञान है कि हमारे साथ जिन्हें कि भारत की अपराधिक जनजाति कहा जाता है, स्वदेशी शासकों, देश के समाज व पुलिस अधिकारियों ने मानवाधिकारों का हनन करते हुए कितना भयावह व अमानवीय व्यवहार किया गया है। इस रिपोर्ट में 1871 के ब्रिटिश शासन के पहले 'क्रिमिनल ट्राइब्स ऐक्ट' से लेकर भारत की संसद द्वारा 1952 में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय जवाहरलाल नेहरू की पहल पर अधिनियमित आखिरी डी-नोटीफाइड ट्राईब्स (विमुक्त जातियाँ) ऐक्ट के बीच के विभिन्न अधिनियमों व कानूनों के भी संदर्भ दिये गये हैं।

इस संलग्न दस्तावेजों से आपके आदरणीय आयोग को हमारी अर्थात भारत की अघोषित जनजाति की ऐतिहासिक

पृष्ठभूमि तथा साथ ही सभी प्रकार से वर्तमान दशाओं की एक अच्छी व स्पष्ट छवि मिलेगी। इसलिए हम इस स्थान पर पुन: अधिक विस्तार व अन्य स्पष्टीकरण में नहीं जा रहे।

तथापि, महानुभाव, हम अपने निवेदन के महत्वपूर्ण व मुख्य बिन्दुओं पर जोर दे रहे हैं और इस बात का औचित्य बता रहे हैं कि भारत की अघोषित जनजातियों हेतु संविधान में एक अलग तीसरी अनुसूची बनानी चाहिए और इसे आपके आदरणीय आयोग के समक्ष रख रहे हैं और आपसे प्रार्थना कर रहे हैं कि भारत की विमुक्त और खानाबदोश जनजातियों हेतु एक अलग तीसरी अनुसूची के निर्माण के लिए भारत के संविधान की धारा 341 व 342 में उपयुक्त संशोधन करने की सिफारिश करें। 1952 के भारत सरकार अधिनियम द्वारा घोषित (नोटीफाईड) 200 के लगभग जनजातियों की सूची आपके संदर्भ व रिकार्ड हेतु संलग्न हैं।

आदरणीय महानुभाव, हमारा कहना है कि यह भारतीय समाज का बड़ा भाग है जिसके बारे में देश की आजादी के बाद कोई भी उचित अध्ययन नहीं किया गया। न तो संविधान के निर्माताओं द्वारा, न ही उन अनेक सरकारों द्वारा जो भी भारत की आजादी के 52 वर्षों में विभिन्न कालों में केंद्र में सत्ता में आई। इस प्रकार हम भारत के गणतंत्र के इन 52 वर्षों में हाशिये में डाल दिये गये और अवहेलना के शिकार हुए।

इसके कारण निम्नलिखित हैं:

1. क्योंकि यह जाना पहचाना तथ्य था कि इन आपराधिक जनजातियों को गाँवों (**ग्रामी** क्षेत्रों), कस्बों व शहरों की ऊँची (जातियों) बिरादरियों द्वारा कभी भी ठहरने नहीं दिया गया क्योंकि पिछले 130 वर्षों में देश व राज्यों के विभिन्न अधिनियमों व कानूनों द्वारा पैदाइशी व आदतन अपराधी करार दे दिया गया था। जबकि अनुसूचित जातियों को गांवों, कस्बों व शहरों के नजदीक रहने दिया जाता था। इस प्रकार वे अन्य जनसंस्था से प्रभावित हो सके और संगठित होने के गुर सीख सके।

2. इसी प्रकार जंगलों व पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों व जनजाति राजाओं ने हमें (डी०एन०टी० को) एक स्थान पर बसकर जंगली भूमि में खेती करके कृषि व्यवसाय नहीं अपनाने दिया। क्योंकि जंगली क्षेत्रों की सभी खेती योग्य भूमि स्थानीय जनजाति समुदायों द्वारा हथिया ली गई थी।

3. हालाँकि, भारत व उसके नागरिकों को 1947 में आजादी मिल गई थी, परन्तु हम अर्थात आपराधिक जनजातियों को भारत की आजादी के पाँच वर्षों बाद 31-08-1952 को ही आजादी प्राप्त हो पायी। अत: संविधान के निर्माताओं ने हमारे बारे में न तो बिल्कुल ध्यान दिया और न ही अध्ययन ही किया और न ही भारतीय समाज में हमारे अस्तित्व के बारे में कोई जानकारी प्राप्त की। एक पूर्व आपराधिक जनजातियों के इतने बड़े भाग के बारे में जिसकी सामाजिक—आर्थिक व शैक्षणिक स्थिति देश की अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों से भी कहीं अधिक खराब थी। अत: हमें ऐसे विशेष संवैधानिक अधिकारों व विशेषाधिकारों से वंचित रखा गया, जैसे देश की अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों को मिले हुए थे।

4. यह भी एक तथ्य है कि भारत की पूर्व आपराधिक जनजाति हम भारत के अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों की तरह अपने आपको व्यवस्थित व संगठित नहीं कर सके जिससे कि हम सरकारी अधिकारियों, संविधान निर्माताओं व राजनीतिक दलों व नेताओं को मिलकर अपने दर्द, दुख व दुर्दशा उनको स्पष्ट कर सकते और उनसे अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों की भांति ही संवैधानिक लाभ प्राप्त कर सकते, प्रार्थना कर सकते और न ही हमारे पास महात्मा गाँधी व बाबासाहेब आंबेडकर जैसे अनुसूचित जाति के व श्री ठक्कर बापा एवं श्री काका कालेलकर जैसी अनुसूचित जनजातियों के गॉड फादर थे। इसलिए किसी ने भी हमारी कठिन, विशिष्ट व असाामान्य परिस्थितियों पर ध्यान देने की परवाह नहीं की और न ही स्वराज्य के इन 52 वर्षों में हमारी दुर्दशा को सुना।

5. ब्रिटिश राज्य हमें कम से कम कुछ आधारभूत सुविधाएँ जैसे स्वास्थ्य, रक्षा, शिक्षा तथा जीवित रहने के लिए रोजगार तथा घोषित (नोटीफाइड) बस्तियों में पुनर्वसन व सुधार की सुविधाएँ तो प्रदान करता था। हमें स्वदेशी शासन द्वारा ये न्यूनतम आधारभूत सुविधाएं भी नहीं दी गई। इसके विपरीत ये आधारभूत सुविधाएँ भी आजादी के बाद हम से छीन ली गईं।

अत: महानुभाव उपर्लिखित पाँच कारणों से भारत की पूर्व आपराधिक जनजातियों अर्थात हमारे पास न तो भूमि थी न ही रोजगार और जीवित रहने के लिए न ही कोई आमदनी का स्रोत। अत: इन पिछले 130 वर्षों में हम अपने पंजों पर भागते रहने को मजबूर रहे। क्योंकि इन सभी 130 वर्षों में भारतीय समाज, साथ ही प्रशासनिक अधिकारी व पुलिस हमसे घृणा करते रहे, सताते रहे, उत्पीड़ित करे रहे व अभियोग लगाते रहे।

आजादी के इन सभी 52 वर्षों में यह देखते हुए कि हमारे समुदायों की अच्छाई के लिए कुछ भी नहीं हो रहा, हम असंतोष व कुंठा की स्थिति में रहे। अब एनडीए की वर्तमान भारत सरकार द्वारा भारत के संविधान की समीक्षार्थ आपके आयोग के गठन के साथ ही आशा की एक किरण जगी है। अत: आदरणीय महानुभाव, हमें यह आशा बँधी है कि आपका आयोग निश्चय ही देश में कम से कम 10 करोड़ की जनसंख्या के 200 के लगभग पूर्व आपराधिक जनजातियों के समुदायों की दुर्दशा पर ध्यान देगा और यह कि वह धारा 341 व 342 में उपयुक्त संशोधन करके भारत की अघोषित जनजातियों के लिए एक अलग तीसरी अनुसूची के निर्माण करने की सिफारिश करेगा। ऊपर दिये पाँच कारणों, दस्तावेजों प्रमाणों व आलेखों जो कि आपके सामने पेश किए गए और इसलिए भी कि इस वास्तविकता के कारण कि सैकड़ों सालों से हमें जनजाति कहकर पुकारा जाता रहा है। सभी ऐतिहासिक पुस्तकें, विभिन्न अधिनियम व नृशास्त्रीय अध्ययन हमें जनजातियों के नाम से संबोधित करते रहे हैं। तब फिर डी.एन.टी. को अनुसूचित जनजाति की सूची के बाहर रखकर अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों तथा विमुक्त जनजातियों में यह भेदभाव क्योंकर कि हमसे भारत के संविधान के अन्तर्गत विभेदक व पक्षपातपूर्ण व्यवहार किया जा रहा है?

हमारी यह प्रार्थना है कि आपका आयोग यह सिफारिश करे कि तीसरी अनुसूची बनाने के बाद डीएनटी (विमुक्त जातियों) के लिए एक अलग आयोग का गठन किया जाए। जिससे कि उनके हिंतों की रक्षा की जा सके और उनके सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक उन्नयन तथा देश में राजनीतिक हिस्सेदारी हेतु विकासोन्मुख कार्य किये जा सके। उनकी जनसंख्या के अनुपात में पंचवर्षीय योजनाओं व बजटों में अलग से प्रावधान किये जाएँ। इसके लिए भारत के महालेखाकार एवं जनगणना आयोग को यह स्पष्ट आदेश दिए जाएँ कि भारत की इन लगभग 200 पूर्व अपराधिक जनजातियों की संलग्न विमुक्त जनजातियों की सूची के अनुसार अलग से जनगणना की जाए।

आपके ध्यान में हम यह लाना चाहते हैं कि पिछली सभी जनगणनाएं भ्रम पैदा करने वाली हैं और विमुक्त जनजातियों (डी.एन.टी.) की जनसंख्या के सही आँकड़े नहीं दर्शातीं। इसका कारण यह है कि देश के कुछ भागों व भारत के अनेक राज्यों तथा क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों की जनगणना करते समय अ.जा. और अ.ज.जा. के साथ मिला दिया गया है।

आदरणीय महोदय, आखिर में हमारी आपसे नम्र प्रार्थना है कि कृपया अपने आयोग के दिल्ली स्थित कार्यालय में किसी भी दिन व समय हमारे प्रतिनिधिमंडल का मिलने का समय प्रदान करें ताकि हमारा प्रतिनिधिमंडल आपसे रूबरू मिल सके और हमारे बारे में दस्तावेजी प्रमाणों के साथ अधिक विवरण आपके सामने पेश कर सके।

आपके आयोग से हमारी यह भी अपील है कि कृपा कर इस बात का पता करने के लिये कि क्या हमारे विमुक्त जनजातियों की जनसंख्या महत्वपूर्ण है या नहीं, आप क्षेत्रीय अध्ययन व जानकारी प्राप्त करवायें। यदि आयोग हमें अनुमति दे तो हम देश के विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों में ऐसे स्थानों की जानकारी दे सकते हैं और स्वयं आपको सभी सीधी जानकारी हेतु इस प्रकार के स्थानों व बस्तियों में ले जा सकते हैं।

हमारी प्रार्थनाओं की इस पहली किस्त के साथ हम भारत के संविधान के संशोधनार्थ आपके आयोग के सामने आपत्तियों व सुझावों वाले इस ज्ञापन का उपसंहार करते हैं।

आदरणीय, आप महानुभाव व आपके आयोग के अन्य आदरणीय सदस्यों के प्रति उच्चतम आदर प्रकट करते हुए,

आपको धन्यवाद देते हुए

आपके विश्वासू

क्रम सं०	अध्यक्ष/सचिव का नाम	प्रतिनिधित्व की जा रही जनजाति/ संस्था का नाम	हस्ताक्षर
1.	महाश्वेता देवी, अध्यक्ष	डी-नोटीफाइड एण्ड नोमॅडिक ट्राईबल्स राईट्स एक्शन ग्रुप	हस्ता.
2.	लक्ष्मण गायकवाड़, उपाध्यक्ष	डी-नोटीफाइड एण्ड नोमॅडिक ट्राईबल्स राईट्स एक्शन ग्रुप	हस्ता.
3.	जी.एन.देवी, सेक्रेटरी	डी-नोटीफाइड एण्ड नोमॅडिक ट्राईबल्स राईट्स एक्शन ग्रुप	हस्ता.
4.	रणजीत नाईक समिति के सदस्य	डी-नोटीफाइड एण्ड नोमॅडिक ट्राईबल्स राईट्स एक्शन ग्रुप व अध्यक्ष ऑल इंडिया बंजारा सेवा संघ (ओ.आई.बी.एस.एस.)	हस्ता.

(पृष्ठ 29 का शेष)

में बन्द थे, उन्हें विमुक्त किया गया। फिर से जैसे हममें एक नई चेतना जाग उठी। आंकीराव साहब ने हम (छारा) को सेटलमेंट के सामने (जहाँ आज का छारानगर है) हम सबको प्लाट दिया और साथ के सभी लोग अलग-अलग दिशाओं में अपने अस्तित्व को ढूँढ़ने निकल गए।

जिन्दगी के साथ सही संघर्ष अब शुरू हुआ था। सरकार ने हमें विमुक्त तो कर दिया लेकिन जैसे घर का पालतू कुत्ता सड़ गया हो और उसे जल्द से जल्द घर से बाहर निकालना जरूरी हो जाता है वैसा ही सुलूक सरकार ने सेटलमेंट में बन्द सभी जनजातियों के साथ किया। हम लोगों के बीच जाना चाहते थे लेकिन हमें किसी ने नहीं अपनाया।

अब तक हम अंग्रेजों के साथ संघर्ष करते थे। लेकिन अब हमें अपने ही देशवासियों के साथ संघर्ष करना था। आखिर कुछ काम न मिलने पर मेरे पति और सभी छारों ने दारू बनाने और चोरियां करने का काम शुरू किया। क्या करें पेट के लिए कुछ तो करना ही था। अब समाज और पुलिस हमारी दुश्मन थी। आजाद भारत में कम-से-कम हमारे लिए तो किसी भी तरह का बदलाव नहीं हुआ था। सरकार ने हमें विमुक्त कर जैसे हमें हमेशा के लिए अपने से और समाज से मुक्त कर दिया था।

बरसों से दिल की तमन्ना थी कि आजादी की हवा में सांस लेंगे, लेकिन सभी आशाएं नकारा साबित हुयी। वही छुपने-छुपाने की जिन्दगी, एक जगह से दूसरी जगह भागने की जिन्दगी, गंदी से गंदी गालियां सुनने की जिन्दगी, समाज के दुत्कार की जिन्दगी, साये की तरह पीछे पड़ी पुलिस के शक की जिन्दगी!

आजादी के 50 सालों के बाद आज हममें कुछ बदलाव आया है। हिन्दुस्तान में जहाँ भी छारा लोग रहते हैं वहाँ शिक्षण का परिमाण बढ़ा है। अब एक ही तमन्ना है-मेरी जो नस्ल थी उन्होंने जिस तरह के दुख दर्द सहन करके अपनी जिन्दगी बिताई है, वैसे दुखों की परछाई भी हमारे बच्चों पर न पड़े। ये बच्चे पढ़े-लिखें और एक दिन चोर जमात मानी जाने वाली इस जमात का बच्चा बड़े फक्र से और छाती फुलाकर कह सके कि "मैं छारा जमात से हूं, जिसने भारतमाता की गुलामी की जंजीरों की कोई एक कड़ी को तोड़ने में अपना योगदान दिया था।"

दिल्ली में जनजातीय शिल्प मेला - एक रिपोर्ट

□ सूरज देव बसन्त

भिंजाला माई गेरा नहीं बाजाय
कइसे चलब नागे-नागे
आगे-आगे रामचन्दर, सेकर पीछे लक्ष्मण
भिंजाला माई गेरा नहीं बाजाय...

यह जनजातीय लोक गीत है जिसे 9, महादेव रोड़, नई दिल्ली स्थित 'ट्राइब्स शॉप' के परिसर में आयोजित जनजातीय मेले में उड़ीसा के सुन्दरगढ़ जिले से आए उरांव जनजाति के स्त्री-पुरुष ढोलक की थाप पर गा रहे थे। मानी उरांव, डाहरू उरांव, बच्छी उरांव आदि दस-एक आदिवासी महिलाओं की यह टीम जब-जब इस परिसर में वी आई पी प्रवेश करते तो उनके स्वागत में उठती और नाचती-गाती। अवसर था ट्राईफेड (भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास संघ) द्वारा आयोजित जनजातीय शिल्प मेला, जिसका शुभारम्भ 12 सितम्बर, 2001 को हुआ। इस मेले में उड़ीसा, झारखण्ड, बंगाल एवं सिक्किम के लगभग 50 उद्यमियों ने अपने-अपने उत्पादों व पारम्परिक कलाओं के साथ हिस्सा लिया। मेले में प्रदर्शित वस्तुओं में ट्राइबल पेंटिंग, ट्राइबल वूड क्राफ्ट, आर्टिफिशियल बोनसाई, पेपरमसी, स्टोन पॉटरी, ट्राइबल गहने, टेक्स्टाइल्स, टेराकोटा आदि प्रमुख आकर्षण थे। इसके अलावा सिक्किम से आए भोटिया कलाकार भगवान बुद्ध की मूर्तियां बना रहे थे। दूसरे कारीगर लाख की चूड़ियाँ, जूट का सामान, सीसल फाइबर का सामान, साबे घास से बना सामान व तांबा, पीतल, कांसा का सामान मेले में ही बना रहे थे। कारीगरों ने बताया कि लोग आ रहे हैं, हमारे काम को पसन्द कर रहे हैं और हमारे सामान भी खरीद रहे हैं।

ट्राईफेड के इस आयोजन पर चर्चा के दौरान आदिवासी शिल्प गृह की शॉप मैनेजर श्रीमती ममता शर्मा ने बताया कि हम यहां देश के विभिन्न हिस्सों से चयनित ऐसे कारीगरों, हस्तशिल्पियों व उद्यमियों को अवसर प्रदान करते हैं जो अब तक छुपे हुए थे। जिनकी कलाकृतियां उत्कृष्ट हैं किन्तु वे सामने नहीं आ पाए थे। उन्होंने बताया कि इसके साथ हम विभिन्न राज्यों की कलाकृतियों को एक दूसरे से परिचित कराने के लिए दो-तीन बड़े आदिवासी बहुल राज्यों के साथ किसी एक उपेक्षित राज्य का चयन करते हैं। जैसे इस बार हमने बंगाल, उड़ीसा व झारखण्ड के साथ सिक्किम को स्थान दिया है।

ट्राईफेड शॉप परिसर में लोक नृत्य प्रस्तुत करते हुए उरांव जनजाति के कलाकार

इस प्रकार के विशेष आयोजनों के बारे में उन्होंने कहा कि हम यह आयोजन 'ट्राइब्स' शॉप को बढ़ावा देने के लिए करते हैं। यहां आनेवाले लोगों का दस्तकारों, हस्तशिल्पियों से सीधा संपर्क बनता है। इसके साथ-साथ हम इन्हें प्रोत्साहित भी करते हैं। राज्य स्तर पर हमारे क्षेत्रीय कार्यालय भी हैं

'ट्राइब्स' शॉप परिसर में बिक्री हेतु प्रदर्शित कलाकृतियां

जहां सेल काउन्टर भी हैं। इस बार के मेले की खास बात यह थी कि यहां होने वाली बिक्री से प्राप्त कुल फायदे का 20 फीसदी ट्राईफेड को देना पड़ा। इसका कारण यह है कि इससे शिल्पगृह का कुल कारोबार का हिसाब लगाया जा सकेगा। इसके लिए शिल्पगृह अपनी रसीदों का प्रयोग करता है जिस पर उन्हें आयकर देना पड़ता है। 12 फीसदी आयकर में चला जाता है। शेष आठ फीसदी लोगों के आने-जाने, रहने-खाने और मानदेय आदि में चला जाता है। इससे हमें भी पता रहता है कि उद्यमियों को आमदनी कैसी हुई। श्रीमती शर्मा ने बताया कि इस तरह के आयोजन कर ट्राईफेड ने अब तक सैकड़ों छुपे कलाकारों, हस्तशिल्पियों को अच्छे मुकाम तक पहुंचाया है। उनमें से कुछ की कलाकृतियों ने राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाई है। राँची, झारखण्ड से आए एक कलाकार का कहना था कि यहां आकर हमें अच्छा लगा। किन्तु उसकी शिकायत भी थी कि हमारे सामान को जहां तक पहुंचना चाहिए, वहां तक नहीं पहुंच पाता। यह पूछने पर कि जब आप में योग्यता है तो आप अपना स्वतन्त्र संगठन या कोऑपरेटिव क्यों नहीं बना लेते? उनका कहना था कि हमारे लोगों में शिक्षा की कमी की वजह से सही विकास नहीं हो पाता। एक दूसरे पर विश्वास की भी कमी है। इसके अलावा दूसरी तरह की भी समस्याएं हैं। जैसे धनाभाव, अच्छे संपर्क का अभाव और विज्ञापन आदि के लिए आधुनिक साधनों का अभाव। हमारे कलाकारों में योग्यता है, उनकी मांग भी है किन्तु हम सही जगह नहीं पहुंच पाते। इस कारण से बिचौलिए इसका फायदा उठाते हैं।.

दूसरे कलाकारों ने बताया कि 'वनवासी मेला', जो कि पिछले वर्ष जवाहर लाल नेहरू स्टेडियम में लगाया गया था, में अच्छी प्रतिक्रिया मिली थी। किन्तु यहां तो जगह ही नहीं है। उनका यह भी कहना था कि इस आयोजन की सूचना के प्रचार-प्रसार के लिए कोई सरकारी प्रयास ही नहीं किया गया तो पब्लिक कहां से आएगी। वी आई पी लोग तो पूरी दुनिया में घूम रहे हैं किन्तु आम आदमी हम तक नहीं पहुंच पाता।

पर श्रीमती ममता शर्मा ने बताया कि हमने इसका विज्ञापन दैनिक अखबारों में, हाउस जर्नल्स में तथा अन्य माध्यमों से किया था।

यह मेला 21 सितम्बर, 2001 तक चला। कुल मिला कर ट्राईफेड का यह आयोजन प्रशंसनीय रहा। आगामी 2001-2002 के लिए प्रस्तावित प्रदर्शनियाँ निम्न प्रकार से हैं—

प्रदर्शनियों के नाम	अवधि
1. महाराष्ट्र, गुजरात व राजस्थान प्रदर्शनी	3.12.2001 से 12.12.2001 तक
2. आसाम, त्रिपुरा, मणिपुर, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश व तक नगालैण्ड प्रदर्शनी	9.1.2002 से 19.1.2002
3. छत्तीसगढ़ प्रदर्शनी	5.2.2002 से 14.2.2002 तक

स्थान : प्रगति मैदान, नई दिल्ली

अरावली के गिरिपाद में मानवाधिकारों एवं संवैधानिक अधिकारों की विकास-यात्रा

राजस्थान के घुमन्तू गाड़िया लोहार जाति के लोग वर्तमान दौर में अत्यन्त कठिन जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनके पास रहने के लिए कोई निश्चित स्थान नहीं है। तेजी से हो रहे उद्योगीकरण के इस दौर में इन लोगों का काम-धंधा भी चौपट हो गया है। इनके जीवन व परिवार की कोई स्थायी पहचान न होना भी इन परिवारों की बड़ी समस्या बन गई है। आए दिन चोरी आदि के सन्देह में पुलिस की जांच-पड़ताल से भी ये परेशान रहते हैं। जयपुर, राजस्थान की 'मुक्तिधारा' संस्था, श्री रतन कात्यायनी के नेतृत्व में कई वर्षों से अरावली की घुमन्तू जनजातियों को बसाने व उनके विकास के लिए कार्य कर रही है। 'मुक्तिधारा' ने अलवर के जिला कलेक्टर श्री तन्मय कुमार के समक्ष कुछ परिवारों को स्थायी रूप से बसाने के लिए एक प्रस्ताव रखा था। अलवर के जिला प्रशासन ने जिले के ग्राम बूढ़ी बावल व महेश्वरा के बीच उपलब्ध जमीन चुनी। प्रशासन ने मुक्तिधारा से प्राप्त सूची की पुष्टि कर एक ब्लू प्रिंट तैयार करवाया। तीन दिन में ही 1200 वर्ग फुट के एक सौ पच्चीस प्लाट काटे गए तथा 87 परिवारों को एक संक्षिप्त समारोह में आवासीय पट्टे दिये गए। इस तरह अलवर जिले के तिजारा विकास खंड में 'मुक्तिधारा' एवं राजस्थान सरकार के संयुक्त प्रयास से लगभग 90 गाड़िया लोहारों के घुमन्तू कबीलों को स्थायी वासन का लाभ मिला। समाज के हाशिए पर रह रहे गाड़िया लोहारों को असली आजादी तो अब मिली है।

अलवर जिले में घुमन्तू गाडिया लोहारों को स्थायी रूप से बसाने हेतु उपलब्ध की गयी भूमि

('बूधन' को भेजी गयी मुक्तिधारा की एक रपट के अनुसार)

नाटक - महाश्वेता देवी से डरता है कौन ?

(महाश्वेता देवी, फैज अहमद फैज, दक्षिण बजरंगे, नन्दकिशोर आचार्य एवं धूमिल की रचनाओं पर आधारित हिन्दी नाटक)

आई पी महिला महाविद्यालय, नई दिल्ली में 28 नवम्बर 2001 को मंचित इस नाटक का एक दृश्य

निर्देशन एवं परिकल्पना—परनब मुखर्जी
संगीत—शाकिल खान, मोनी दीपा सेन

पपेटरी परिकल्पना—अनुरूपा राय
प्रोडक्शन नियंत्रक—डा॰ मनस्विनी योगी

स्थान : मुख्य सभागार, श्रीराम सेंटर, मंडी हाउस नई दिल्ली-110002,
आगामी मंचन, दिनांक : 9-12-2001 **समय :** सायं 6.00 बजे

दिल्ली चलो अभियान

'लोक अधिकार परिषद', बड़ोदरा की अगुआई में लगभग एक सौ विमुक्त, घुमन्तू एवं अन्य जनजातियों का समूह आगामी 9 व 10 दिसम्बर को 'इंडिया इन्टरनेशनल सेंटर' नयी दिल्ली की एनेक्सी में एकत्रित होगा। अपनी दो दिवसीय कार्यशाला के दौरान यह समूह न्यायमूर्ति श्री वेंकटचलैया, संविधान संशोधन हेतु बने आयोग के अध्यक्ष, न्यायमूर्ति श्री वर्मा, अध्यक्ष, मानवाधिकार आयोग, श्री दिलीप सिंह भूरिया, अध्यक्ष, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग, श्री जार्ज फर्नांडीज, संयोजक, राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन और श्री जुएल ओराम, जनजातीय मामलों के मंत्री, भारत सरकार से मिलेगा। समूह प्रधानमंत्री, भारत सरकार से भी मिलने का प्रयास करेगा। इस अभियान का उद्देश्य है विमुक्त, घुमन्तू एवं अन्य जनजातियों के अधिकारों के लिए सतत प्रयत्नशील संस्था 'डी एन टी-रैग' तथा जनजातियों के अधिकारों के लिए प्रयास करने वाली बड़ोदरा की ही संस्था 'भाषा रिसर्च सेंटर' के एजेंडों को आगे बढ़ाना।

('लोक अधिकार परिषद' से प्राप्त सूचना के अनुसार)

पुस्तक चर्चा

डिसऑनर्ड बाई हिस्ट्री
'क्रिमिनल ट्राइब्स' एण्ड ब्रिटिश कोलोनियल पॉलिसी
लेखिका : मीना राधाकृष्ण
प्रकाशक : ओरिएन्ट लांगमैन लिमिटेड, नयी दिल्ली

ब्रैण्डेड बाई लॉ
लुकिंग ऐट इंडियाज डिनोटिफाइड ट्राइब्स
लेखक : दिलीप डि' सूजा
प्रकाशक : पेंनग्विन बुक्स, नयी दिल्ली

स्वतंत्र भारत में 'अपराधी जनजाति अधिनियम 1871' में शामिल जनजातियों को विमुक्त किया जा चुका है। परन्तु इन जनजातियों के प्रति हमारे पूर्वाग्रह पूर्ववत् हैं। आज भी इन जनजातियों के लोगों को जनता तथा प्रशासन दोनों ही द्वारा शंका की दृष्टि से देखा जाता है। यह सच है कि जीवन में विभिन्न विषयों पर हमारे कुछ-न-कुछ पूर्वग्रह होते हैं। परन्तु यह हमारा एक ऐसा पूर्वग्रह जिसकी सजा इस देश की इन जनजातियों के करोड़ों लोगों को बिना अपराध किए भोगनी पड़ रही है।

विगत दिनों विमुक्त एवं घुमन्तू जनजातियों की इन्हीं समस्याओं पर केन्द्रित दो पुस्तकें प्रकाशित हुईं।

मीना राधाकृष्ण ने अपने अध्ययन में औपनिवेशिक राज्य के उपरोक्त संदर्भित अधिनियम के इतिहास तथा इसके निहितार्थ की खोज बीन बड़ी ही मौलिकता से किया है। मद्रास की घुमन्तू कोरवा जनजाति इस अध्ययन के केंद्र में है।

दिलीप डि' सूजा ने अपने अध्ययन में पूर्वग्रहों की परीक्षा की है। जीवन में हम एक दूसरे के प्रति बहुत कुछ ऐसे पूर्वाग्रह रखते हैं और उन पर कोई सवाल भी खड़ा नहीं करते, यद्यपि वे पूर्णत: अर्थहीन व तथ्यों से परे होते हैं। विमुक्त एवं घुमन्तू जनजातियों के जीवन के माध्यम से वे हमारे इन्हीं पूर्वग्रहों को चुनौती देते हैं।

- अनिल कुमार पाण्डेय

सहयात्री पत्रिकाएं

1. **पहल** :- ज्ञानरंजन, 101, राम नगर, आधारताल, जबलपुर (म०प्र०) 482004
2. **कथन** :- रमेश उपाध्याय, 107, साक्षरा अपार्टमेंट, ए-3 पश्चिम विहार, नई दिल्ली-63
3. **समकालीन सृजन** :- श्री शंभुनाथ, 20, बालमुकुन्द मक्कर रोड, कलकता-700007
4. **संधान** :- सुभाष गाताड़े, बी 2/51, सेक्टर-16, रोहिणी, दिल्ली-110085
5. **कृति ओर** :- विजेन्द्र, सी-133, वैशाली नगर, जयपुर (राजस्थान)
6. **सम्बोधन** :- कमर मेवाड़ी, चाँदपोल, कांकरोली, राजसमन्द-313324 (राजस्थान)
7. **शेष** :- हसन जमाल, पन्ना निवास के पास, लोहारपुरा, जोधपुर-342002
8. **साम्य** :- विजय गुप्त, ब्रह्मरोड, अम्बिकापुर-497001 (म०प्र०)
9. **अलाव** :- रामकुमार कृषक, सी-3/59, सातदपुर विस्तार, करावल नगर, दिल्ली-110094
10. **समयान्तर** :- पंकज बिष्ट, 79-ए, दिलशाद गार्डेन-दिल्ली 110095
11. **वर्तमान साहित्य** :- विभूति नारायण राय, प्रथम तल, 1-2 मुकुन्द नगर, हापुड़ रोड, गाजियाबाद (उ०प्र०)
12. **आम आदमी** :- रमणिका गुप्ता, प्रणेश कुमार, नवलेखन प्रकाशन, हजारीबाग
13. **कल के लिए** :- जयनारायण, अनुभूति प्लानिंग कॉलोनी के पीछे, सिविल लाइंस, बहराइच (उ०प्र०)
14. **इतिहास बोध** :- लाल बहादुर वर्मा, 1496 किदवई नगर, अल्लापुर, इलाहाबाद-211006
15. **दायित्व बोध** :- विश्वनाथ मिश्र, ने.पी.जी. कॉलेज, बड़हलगंज, गोरखपुर (उ०प्र०)
16. **छात्र संग्राम** :- निशान्त, पो. बा. 5, फे. ऑ.-भेटिया पड़ाव, हल्द्वानी, उ.प्र.
17. **सापेक्ष**:- महावीर अग्रवाल, एच-24/8, सिविल लाइन, कसारीडीह, दुर्ग-491001
18. **संदर्श** :- सुधीर विद्यार्थी, शंकर नगर, बीसलपुर, पीलीभीत-262201
19. **नया पथ** :- राजेश जोशी एम.आई.जी. 99, सरस्वती नगर, जवाहर चौक, भोपाल (म०प्र०)
20. **हंस** :- राजेन्द्र यादव, 2/36, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
21. **दस्तावेज** :- विश्वनाथ प्र० तिवारी, बेतियाहाता, गोरखपुर (उ०प्र०)
22. **निष्कर्ष** :- गिरीशचन्द्र श्रीवास्तव, 59, खैराबाद, दरियापुर रोड, सुलतानपुर-228001
23. **सामयिक वार्ता** :-राजेन्द्र राजन, सी-28, गली न. 8ए, पश्चिम विनोदनगर, दिल्ली-92
24. **सर्वनाम** :- विष्णुचंद्र शर्मा, ई-2 सादतपुर, दिल्ली-110094
25. **जयलोक** :- जयंत वर्मा, सेवा सदन, पोलीपाथर, नर्मदा रोड, जबलपुर-482008
26. **नीति मार्ग** :- जयंत वर्मा, 4-एम आई जी, त्रिवेणी कॉम्पलेक्स, रोशनपुरा, टीटी नगर, भोपाल-462003
27. **अरावली उद्घोष** :-हरिराम मीणा, 31, शिव शक्ति नगर, किंग्स रोड, अजमेर हाई-वे, जयपुर-302019
28. **शैक्षिक सन्दर्भ** :- राजेश खिंदरी, एकलव्य, कोठी बाजार, होशंगाबाद-461001
29. कथा देश : - हरिनारायण, सी-52/ जेड-3, दिलशाद गार्डन, दिल्ली-110095

महापंडित राहुल सांकृत्यायन प्रतिष्ठान

उद्देश्य

- न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन की कृतियों पर अनुसंधान कार्य करेगा तथा उनके कार्यों पर किसी भी अनुसन्धान को सहायता एवं धन प्रदान करेगा एवं उसे प्रोन्नत करेगा।
- न्यास उन क्षेत्रों में जिनमें कि महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने कार्य किया जैसे इतिहास एवं पुरातत्व, मानव मात्र की प्रगति एवं विकास, यात्रा वृत्तांत यायावरी, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता, दर्शन, धर्म, भाषा, विज्ञान एवं समाज तथा भारत विद्या के क्षेत्रों में शिक्षा एवं अनुसंधान का कार्य करेगा तथा इन विषयों में किये गय कार्यों को प्रोन्नत करेगा तथा धन एवं सहायता प्रदान करेगा।
- न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन के अनुरूप लोकचित्त पर से मिथ्या रूढ़ियों के जंजाल को दूर करने की कोशिश करेगा।
- न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन द्वारा दिखाए गये भारतीय संस्कृति के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण स्वीकार करता है तथा न्यास इस दृष्टिकोण के प्रसार, प्रचार हेतु उचित कदम उठाएगा जिससे कि आम भारतीय धर्मान्धता एवं रूढ़िवादिता तथा अज्ञानता से ऊपर उठकर एक ऐसा मानव बन सके जो अपने अच्छे-बुरे का फैसला स्वयं कर सके।
- न्यास मानव समाज के विकास का वैज्ञानिक दृष्टिकोण स्वीकार कर विज्ञान एवं समाज के समन्वित विकास की ओर आम जनता का ध्यान आकर्षित करेगा। यह महापंडित राहुल सांकृत्यायन द्वारा दिखाए गये उस उद्देश्य के अनुरूप होगा जिसके द्वारा वे समस्त मानव जाति को न्याय, समता, अन्न-वस्त्र और ज्ञानोपार्जन का सुयोग दिलवाना चाहते थे।
- न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन द्वारा तिब्बत से लाए गये दुर्लभ एवं अनमोल ग्रंथों एवं पाण्डुलिपियों को भोट भाषा से संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं में अनुवाद एवं प्रकाशन की व्यवस्था कराएगा। न्यास महापंडित की अन्य पुस्तकों को भी विभिन्न भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में अनुवाद कराने एवं प्रकाशित करने/कराने की व्यवस्था करेगा। न्यास शीघ्र बिहार रिसर्च सोसायटी में महापंडित राहुल द्वारा दान दिये गये ग्रन्थों की माइक्रोफिल्मिंग का प्रबन्ध करेगा व इन्हें दिल्ली में स्थानान्तरण करवाने का प्रयत्न करेगा जिससे कि ज्यादा से ज्यादा लोग इन ग्रंथों का उपयोग कर सकें।
- न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन के समग्र साहित्य एवं उन पर हो रहे सारे कार्यों को एक स्थान पर उपलब्ध करायेगा।
- न्यास महापंडित राहुल सांकृत्यायन की रचनाओं को सस्ते दाम पर आम जनता को उपलब्ध करायेगा। ऐसा करने के पीछे न्यास का उद्देश्य है महापंडित राहुल सांकृत्यायन के विचारों को जन साधारण तक पहुंचाना जिनके लिए उन्होंने लिखा।

बूधन

सदस्यता प्रपत्र

दिनांक__________

प्रतिष्ठा में,
संपादक
बूधन
बी–3, सी.ई.एल. अपार्टमेंट्स,
बी–14, वसुन्धरा एन्क्लेव,
दिल्ली-110 096
फोन : 2618064

महाशय,

हम 'बूधन' पत्रिका की सदस्यता ग्रहण करना चाहते हैं। कृपया हमें सदस्य बनाएं।

	व्यक्तिगत	संस्थागत
आजीवन	1000 रु. ☐	2000 रु. ☐
त्रैवार्षिक	100 रु. ☐	200 रु. ☐
द्विवार्षिक	70 रु. ☐	140 रु. ☐
वार्षिक	40 रु. ☐	80 रु. ☐

हम सदस्यता शुल्क के रूप में नकद/चैक/डी.डी. नं.________ बैंक ________ तारीख ________ रु.________ 'महापंडित राहुल सांकृत्यायन प्रतिष्ठान' (Mahapandit Rahul Sankrityayan Pratishthan) के पक्ष में संलग्न कर रहे हैं।

कृपया अधिकारिक रसीद भेजें।)

भवदीय

(हस्ताक्षर)

नाम/पता________

विज्ञापन बुकिंग प्रपत्र

प्रतिष्ठा में, दिनांक ....

संपादक
बूधन
बी–3, सी.ई.एल. अपार्टमेंट्स,
बी–14, वसुन्धरा एन्क्लेव,
दिल्ली-110 096
फोन : 2618064

महाशय,

कृपया नीचे वर्णित विवरण अनुसार हमारे विज्ञापन के लिए स्थान सुरक्षित करें :

चौथाई पृष्ठ : 400 रु. ☐	भीतर का कवर : 2000 रु. ☐
आधा पृष्ठ : 700 रु. ☐	पीछे का कवर : 3000 रु. ☐
पूरा पृष्ठ : 1200 रु. ☐	

हम विज्ञापन सामग्री एवं चैक/डी.डी. नं. ....

तारीख .... रुपये ....

बैंक ....

'महापंडित राहुल सांकृत्यायन प्रतिष्ठान' (Mahapandit Rahul Sankrityayan Pratishthan) के पक्ष में संलग्न कर रहे हैं, जो दिल्ली में देय है (केवल डी.डी. के लिए)।

कृपया अधिकारिक रसीद भेजें।

आपका विश्वासी

(हस्ताक्षर)

नाम ....

मुहर ....

पता ....

प्रकाशनार्थ आलेख आमंत्रण सूचना

विमुक्त, घुमन्तू एवं अन्य जनजातियों के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं अन्य पहलुओं पर आपके अनुभव, शोधपूर्ण मौलिक लेख, कहानी, नाटक, कविता व रोचक प्रसंग आमंत्रित हैं। कृपया रचना स्पष्ट अक्षरों में या टाइप कर भेजें। यदि आप चाहते हैं कि अस्वीकृत रचना आपके पास वापस भेजी जाए तो कृपया डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा रचना के साथ भेजें। स्वीकृत रचनाओं की सूचना रचना प्राप्ति के एक महीने के भीतर दे दी जाती है। रचनाओं के प्रकाशन में संपादक मंडल का फैसला अन्तिम एवं निर्णायक होगा।

– संपादक

राष्ट्रपति की चेतावनी

''...ऐसा न हो कि आने वाली पीढ़ियाँ यह कहें कि भारतीय गणतंत्र का निर्माण हरित धरती और उन मासूम आदिवासियों के विनाश की नींव पर हुआ था जो वहाँ सदियों से निवास कर रहे थे। एक महान समाजवादी नेता ने एक बार कहा था कि दुनिया को बदलने की जल्दबाजी में कोई महान व्यक्ति किसी बच्चे को ठक्कर मार कर गिरा देता है, तो वह भी अपराध करता है। भारत के बारे में भी यह कहने की नौबत न आये कि अपने विकास की हड़बड़ी में इस महान गणतंत्र ने हरित धरती माता को नष्ट-भ्रष्ट किया और अपने आदिवासी समाजों को उजाड़ा है।...''

(गणतंत्र दिवस 2001 के अवसर पर राष्ट्र के नाम संदेश से)

TRIBAL COOPERATIVE MARKETING DEVELOPMENT FEDERATION OF INDIA LTD
(Ministry of Tribal Affairs, Govt.of India)

TRIFED : A VISION AND A MISSION

To give the tribal people of India remunerative prices for their tribal produce.

TRIFED is a National Cooperative headquartered in New Delhi.

TRIFED's strength :

Its major offices located in New Delhi, Jagdalpur, Bhubaneshwar, Mumbai, Chennai, Calcutta, Hyderabad, Udaipur, Guwahati, Ranchi, Bhopal, Mysore, Vishakhapatnam,, Nasik and Ahmedabad.

TRIFED's objectives :

- extending remunerative prices to tribal people for MFP / SAP at the pro·urement stage
- organising the sale of the produce in the domestic as well as in the export market at the best possible prices.
- TRIFED's training programmes have benefitted over 50,000 tribal people and created employment to around 10,000 families.
- TRIFED's timely intervention for tribals has resulted in a 100% increase in the pirces paid to the tribal growers/collectors of Minor Forest Produce.

TRIFED & TRIBES :

TRIFED helps the tribal craftspersons to earn competitive prices for their handlooms and handicrafts by displaying tribal artefacts at the TRIBES SHOP in the capital.

India Today, Nov,29 1999, says about the TRIBES SHOP:
"It is the kind of store that will take you deep into the heart of India......."

TRIFED : Creating avenues for MFP exports and for the domestic market.

TRIFED HEAD OFFICE: NCUI Building , IInd floor, 3, Siri Institutional area, August Kranti Marg, New Delhi-110016. Tel Nos 6569064, 6968247, 6968279.
E-Mail : trifed@nda.vsnl.net.in
Visit the TRIFED WEBSITE: www.trifed.net

प्रोग्रेसिव प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-95 से मुद्रित